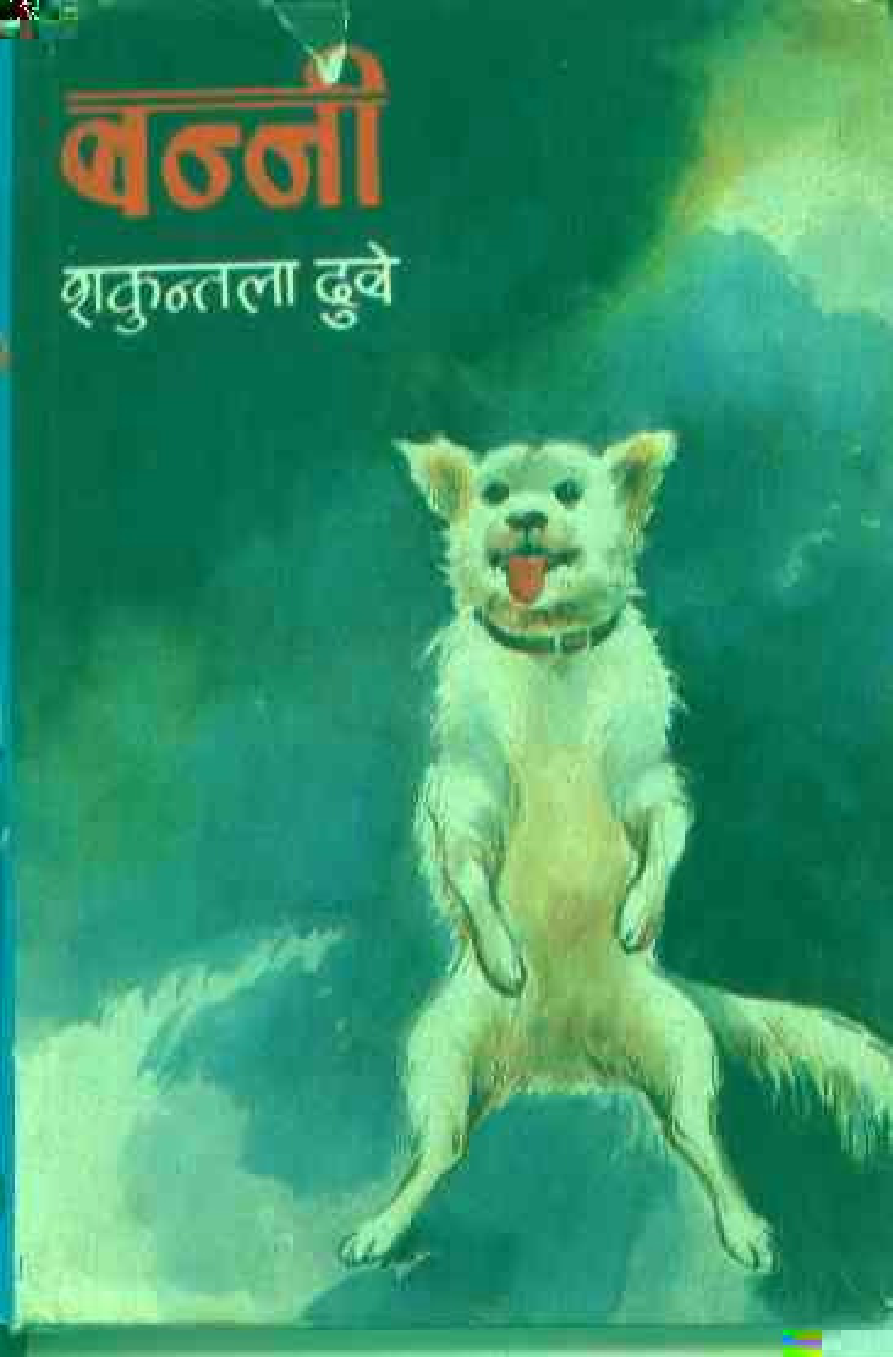
बन्नी

शकुन्तला दुबे




बन्ती
शकुन्तला दुबे

डॉ. शकुन्तला दुबे की अत्यंत पठनीय और रोचक कृति 'बन्नी' मैं आद्यंत पढ़ गया। एक प्रिय पालतू प्राणी पर शायद यह हिंदी में पहली औपन्यासिक कृति है। ऐसी एक अंग्रेजी पुस्तक मैंने प्रिय घोड़े के बारे में देखी थी। उसका मराठी अनुवाद भी हुआ था। परंतु कमाल की भावपूर्ण सत्य जीवन पर आधारित पुस्तक आज के पर्यावरण और पशु-पक्षी प्रेम के लिए अनुकूल जीव-दया वातावरण में बहुत मूल्यवान कृति है।

लेखिका ने अपने प्रिय पात्र को शिशुवत् स्नेह दिया है। विशेषतः जब वह खो जाता है, रेलयात्रा और उसकी वापसी के लिए जो वे प्रयत्न करती हैं, पर कथा तो बहुत ही दिलचस्प है। यह मानवीय स्नेह जो प्राणी-जगत् तक फैला है उसके मूल में उस प्राणी की विशेष संवेदना-शक्ति का भी बहुत बड़ा हाथ है। मैंने मार्कट्वेन की उक्ति पढ़ी थी, "यदि आप एक कुत्ते को सड़क से उठाकर खाना दो और घर में पालो तो वह जिंदगीभर आपसे वफ़ादार रहेगा परंतु यदि आप एक आदमी को घर पर बुलाकर खाना दो और रखो तो वह आपकी पीठ में कब छुरा भोंक देगा, कहा नहीं जा सकता।" कुछ बातों में जिसे हम कुत्ता और पिल्ला कहकर हीन समझते हैं, वह मनुष्य से कहीं अधिक समझदार और संवेदनशील होता है।

कबीर ने कहा था, "हौं तो कूकर राम का"। या आसाम के संत कवि शंकरदेव ने गीता की उक्ति का ही मानों उल्था किया अपनी भाषा में :

कुकूर चांडाल गर्दभर आत्या राय
जानिया सबा को करिबा प्रणाम !

स्वामी रामदास छत्रपति शिवाजी के गुरु थे। श्वान को वे 'समर्थ' का सेवक मानते थे। दत्तात्रेय के साथ चार कुत्ते वेद की तरह चलते थे। गुरु रामदास भी एक कुत्ता पालते थे। महाभारत में धर्मराज को स्वर्ग जाने की

[शेष मैटर अगले फ्लैप पर]

ISBN 81-85478-14-7

मूल्य : 50.00

बन्दी

शकुन्तला दुबे



दो शब्द

डॉ० शकुन्तला दुबे की अत्यंत पठनीय और रोचक कृति 'बन्नी' मैं आद्यंत पढ़ गया। एक प्रिय पालतू प्राणी पर शायद यह हिंदी में पहली औपन्यासिक कृति है। ऐसी एक अंग्रेजी पुस्तक मैंने प्रिय घोड़े के बारे में देखी थी। उसका मराठी अनुवाद भी हुआ था। परंतु यह क़माल की भावपूर्ण सत्य जीवन पर आधारित पुस्तक आज के पर्यावरण और पशु-पक्षी प्रेम के लिए अनुकूल जीव-दया वातावरण में बहुत मूल्यवान कृति है।

लेखिका ने अपने प्रिय पात्र को शिशुवत् स्नेह दिया है। विशेषतः जब वह खो जाता है, रेलयात्रा और उसकी वापसी के लिए जो वे प्रयत्न करती हैं, पर कथा तो बहुत ही दिलचस्प है। यह मानवीय स्नेह जो प्राणी-जगत् तक फैला है उसके मूल में उस प्राणी की विशेष संवेदना-शक्ति का भी बहुत बड़ा हाथ है। मैंने मार्कट्वेन की उक्ति पढ़ी थी, "यदि आप एक कुत्ते को सड़क से उठाकर खाना दो और घर में पालो तो वह जिंदगीभर आपसे वफ़ादार रहेगा परंतु यदि आप एक आदमी को घर पर बुलाकर खाना दो और रखो तो वह आपकी पीठ में कब छुरा भोंक देगा, कहा नहीं जा सकता।" कुछ बातों में जिसे हम कुत्ता और पिल्ला कहकर हीन समझते हैं, वह मनुष्य से कहीं अधिक समझदार और संवेदनशील होता है।

कबीर ने कहा था, "हौं तो कूकर राम का"। या आसाम के संत कवि शंकरदेव ने गीता की उक्ति का ही मानों उल्था किया अपनी भाषा में :

कुकूँरं चांडाल गर्दभर आत्या राय
जानिया सवा को करिबा प्रणाम !

स्वामी रामदास छत्रपति शिवाजी के गुरु थे। श्वान को वे 'समर्थ' का सेवक मानते थे। दत्तात्रेय के साथ चार कुत्ते वेद की तरह चलते थे। गुरु रामदास भी एक कुत्ता पालते थे। महाभारत में धर्मराज को स्वर्ग जाने की इजाज़त नहीं मिली, पर उनका कुत्ता स्वर्ग में सीधे चला गया।

मैंने 'खरगोश के सींग' (1950 में लिखी हास्य निबंधों की पुस्तक) में पहला ही अध्याय 'कुत्ते की डायरी' लिखी, जो बहुत सराहा गया। कई जगह उद्धृत हुआ, पढ़ाया गया। तब से मैं कुत्ते महाशय पर चिंतन और विचार कर रहा हूं। मुझे पढ़ने से पता लगा कि मनुष्य और कुत्ते की दोस्ती 12000 बरस पुरानी है। मिस्र की क़ब्रों पर कुत्ते मिलते हैं। अकेले अमरीका में पालतू कुत्ते 4,90,00,000 हैं और कनाडा में 30,00,000 इन पालित प्राणियों के सैकड़ों क़िस्में होते हैं— शिकारी, चौकीदारी करने वाले, कामकाजी, संघबद्ध रहने वाले, गैरशिकारी आदि। इनकी इंद्रियां मनुष्य से कहीं अधिक विकसित होती हैं। विशेषतः स्पर्श और घ्राण शक्ति। उसकी नाक और मूंछों से हवा का रुख़, अनुकूल-प्रतिकूल व्यक्ति या प्राणी, सूंघकर पहचानने की शक्ति मनुष्य से कहीं अधिक है। उसकी सुनने की शक्ति भी मनुष्य से अधिक तीव्र होती है। कुत्ते में ये संवेदनाएं इतनी विकसित होती हैं कि 6 महीने का श्वान-शावक दस बरस के बालक की तरह होता है, और 2 बरस का श्वान 24 बरस के आदमी जैसा होता है। कुत्ते की औसत आयु 12 से 15 वर्ष की होती है।

परतु इस पुस्तक के नायक 'बन्नी' की दुखद मृत्यु पर उसकी अभिभाविका का जो मार्मिक भाव-बोध व्यक्त हुआ है, वह मूक प्राणी के प्रति लेखिका के स्नेह और वात्सल्य की प्रगाढ़ मात्रा के द्योतक हैं। कई स्थलों पर पुस्तक गद्य-काव्य जैसी लगती है। हमें पता लगा कि कुत्ते के हृदय का हर मिनट में 70 से 120 बार स्पंदन होता है, मनुष्य का 70 से 80 बार। कुत्ते का शरीर तापमान 101.5 फ़ारेनहाइट होता है, मनुष्य का 98.6 फारेनहाइट। कुत्ते को आदमी जैसा पसीना नहीं आता। वह अपनी जीभ बाहर निकालता है और हांफता है। इसी तरह से वह अपने आपको ठंडा करता है। ऐसे कई अंतर होने पर भी कुत्ते की समझ मनुष्य से कई बातों में अधिक होती है।

इस पुस्तक में बन्नी के लेखिका के जीवन में प्रवेश से अंत तक ऐसा मधुर संबंध स्थापित होता रहा है कि उसे एक तरह से सखा, शिष्य, दिशादर्शक, रक्षक मित्र, बंधु, बालक, स्नेहभाजन सब कुछ कहा जा सकता है। और उसके बाद भी

कुछ अपरिभाषेय रह जाता है। डॉ० दुबे केवल मनोविज्ञान की विशेषज्ञा ही नहीं हैं, प्राणी-जीवन की मूक भाषा भी वे उसकी आंखों, स्पर्श और व्यवहार से पहचानने की अद्भुत क्षमता रखती हैं। अकेले जीवन का यह साथी अब डॉ० दुबे को और अकेला कर गया। यह श्रद्धांजलि एक अद्भुत संबंध के प्रति है। पालित पशु के प्रति भक्ति और भावुकता दोनों ओर प्रेम पलता है।

यह पुस्तक हर अहिंसा-प्रेमी को पढ़नी चाहिए। यह बन्नी की गाथा नहीं, मनुष्य की उदारता की कथा है। हम सब अधिक सभ्य बनें, प्राणी जीवन के प्रति अधिक संवेदनशील बनें, यही इस पुस्तक का संदेश है।

मैंने कोई भी प्राणी कभी पाला नहीं। पर लगता है कि मेरे भीतर ही कई प्राणी हैं, या कि जिन्हें मैं चाहता हूं उनके भीतर कई प्राणी जिन्हें वन्य से पालित करते रहने की नित्य आवश्यकता है।

मैं लेखिका को बधाई देता हूं। उनकी भाषा शैली विषयानुरूप, प्रसाद गुणवती, सरस है।

प्रभाकर माचवे

दो नयनों के झरोखों में
अनंत चेतना का फैलाव
देखा मैंने कितनी बार
स्निग्ध बंधन में बंधे लगातार
अनायास

थिरक-थिरक कर बैठा वह
चंचलता समेटे एक कोने में
शांत निश्चल बन गयी मानो
स्वयं चंचलता अपना रूप
अनुहार

मुग्धहास-सा-बिखर रहा है
मेरे आंगन में उसका अनुराग
हम दोनों की क्रीड़ा में
खुल गये प्यार के समस्त
अनुमोदन

शिशु-सा किलक उठा है
मेरे मातृत्व के सान्निध्य में
सोयी चेतना को झंकारित करता
चट्टानों के बीच नीली जलधार-सा
अस्तित्व

नातों-रिश्तों में बिखरा संसार
सिमटकर बंध गया उसके प्रेम में
जो अनंत की खोज में भाग रहा
वर्तमान-सा साथ-साथ होने को
अदृश्य

मृत्यु के द्वार खुलने तक
कौन भाग रहा मेरे साथ-साथ
धर्मराज बना क्या ले जायेगा मुझे
स्वर्गद्वार तक पहुंचाने रे बन्नी
अबोध

11 मई, 1979

उसके साथ भागते-भागते, वह तो वैसा ही था, लेकिन मेरी सांस फूलने लगी थी, जितनी तेज़ रफ़्तार से वह भागता, उतनी ही अधिक वेगवती उसकी जीवन उमंग। मुझको थका हुआ देख वह रुका, और चुपचाप मेरी अगली प्रतिक्रिया जानने की उत्सुकता में मुड़-मुड़कर मुझे देख रहा था। जैसे मेरे शरीर की हर धड़कन को महसूस करने की वह उसकी कोशिश थी। उसकी आंखों में सारी याचकता आकर समा गयी हो, क्योंकि मेरी स्वीकृति के बिना वह भागना नहीं चाहता था। भागना उसकी प्रकृति थी, लेकिन अपने उत्साह पर वह मालिक की आज्ञा का अंकुश सदैव लगाये रहना चाहता था। उसको बैठ जाने का आदेश दे, मैं पगडंडी के समीप पत्थर पर बैठ गयी। बैठते ही हम दोनों में घनिष्ठ अंतरंग वार्तालाप शुरू हो गया, जिसको शब्दों में आपको बतलाना कठिन है, यदि आपने भी कभी... छोड़िए मेरे और उसके बीच के संबंध।

अच्छा, बताती हूं केवल आपकी जिज्ञासा के लिए—जब दो मित्र मिलते हैं, तो उनमें शब्दों से वार्तालाप होता है, ढेर-सी बातें बताने और सुनने के लिए। आत्मीयता का भाव दो प्रेमीजन में अत्यधिक होता है; दो शरीर, दो प्राण एक होने के लिए अत्यधिक व्याकुल हो उठते हैं। मां और शिशु में घनिष्ठ अंतरंग वार्तालाप होता है। दोनों एक-दूसरे को कुछ देने और पाने के लिए। मां ललक भरे वात्सल्य को और शिशु ममत्व पाने के लिए, भूख से अधिक मां के स्पर्श, गंध, सुरक्षा और स्तनपान की लालसा में। लेकिन हम दोनों के बीच का संबंध इन सांसारिक संबंधों से परे की बात है। यह शब्द-जाल नहीं है, वास्तविकता है।

सुनिए, हम दोनों में अंतरंग भाव कुछ देने या पाने की प्रक्रिया से नहीं शुरू होता है। वह जब भी मेरे पास होता, वह बड़े विश्वस्त भाव से पास में अपनी टेरिटरि (भूक्षेत्र) बनाकर बैठता। वह तो

मुग्धहास-सा-बिखर रहा है
मेरे आंगन में उसका अनुराग
हम दोनों की क्रीड़ा में
खुल गये प्यार के समस्त
अनुमोदन

शिशु-सा किलक उठा है
मेरे मातृत्व के सान्निध्य में
सोयी चेतना को झंकारित करता
चट्टानों के बीच नीली जलधार-सा
अस्तित्व

नातों-रिश्तों में बिखरा संसार
सिमटकर बंध गया उसके प्रेम में
जो अनंत की खोज में भाग रहा
वर्तमान-सा साथ-साथ होने को
अदृश्य

मृत्यु के द्वार खुलने तक
कौन भाग रहा मेरे साथ-साथ
धर्मराज बना क्या ले जायेगा मुझे
स्वर्गद्वार तक पहुंचाने रे बन्नी
अबोध

11 मई, 1979

उसके साथ भागते-भागते, वह तो वैसा ही था, लेकिन मेरी सांस फूलने लगी थी, जितनी तेज रफ़्तार से वह भागता, उतनी ही अधिक वेगवती उसकी जीवन उमंग। मुझको थका हुआ देख वह रुका, और चुपचाप मेरी अगली प्रतिक्रिया जानने की उत्सुकता में मुड़-मुड़कर मुझे देख रहा था। जैसे मेरे शरीर की हर धड़कन को महसूस करने की वह उसकी कोशिश थी। उसकी आंखों में सारी याचकता आकर समा गयी हो, क्योंकि मेरी स्वीकृति के बिना वह भागना नहीं चाहता था। भागना उसकी प्रकृति थी, लेकिन अपने उत्साह पर वह मालिक की आज्ञा का अंकुश सदैव लगाये रहना चाहता था। उसको बैठ जाने का आदेश दे, मैं पगडंडी के समीप पत्थर पर बैठ गयी। बैठते ही हम दोनों में घनिष्ठ अंतरंग वार्तालाप शुरू हो गया, जिसको शब्दों में आपको बतलाना कठिन है, यदि आपने भी कभी... छोड़िए मेरे और उसके बीच के संबंध।

अच्छा, बताती हूं केवल आपकी जिज्ञासा के लिए—जब दो मित्र मिलते हैं, तो उनमें शब्दों से वार्तालाप होता है, ढेर-सी बातें बताने और सुनने के लिए। आत्मीयता का भाव दो प्रेमीजन में अत्यधिक होता है; दो शरीर, दो प्राण एक होने के लिए अत्यधिक व्याकुल हो उठते हैं। मां और शिशु में घनिष्ठ अंतरंग वार्तालाप होता है। दोनों एक-दूसरे को कुछ देने और पाने के लिए। मां ललक भरे वात्सल्य को और शिशु ममत्व पाने के लिए, भूख से अधिक मां के स्पर्श, गंध, सुरक्षा और स्तनपान की लालसा में। लेकिन हम दोनों के बीच का संबंध इन सांसारिक संबंधों से परे की बात है। यह शब्द-जाल नहीं है, वास्तविकता है।

सुनिए, हम दोनों में अंतरंग भाव कुछ देने या पाने की प्रक्रिया से नहीं शुरू होता है। वह जब भी मेरे पास होता, वह बड़े विश्वस्त भाव से पास में अपनी टेरिटरि (भूक्षेत्र) बनाकर बैठता। वह तो

मुझसे अधिक समर्थ जीव था, वह मुझसे तेज़ दौड़ ही नहीं सकता था, अत्यधिक हावी होकर अपनी टेरिटरी में आये अन्य किसी को सफलता से भगा सकता था। लेकिन स्वामी के भूक्षेत्र में वह अत्यंत विनीत भाव से चरणों में शरण लेने के लिए व्याकुल रहता था। प्रतिपल यही जानना चाहता था कि उसके स्वामी की इस समय क्या इच्छा है ? वह कैसे उसे तुरंत पूरा कर लाये, कहीं कोई अन्य आकर उसके स्वामी के विश्राम को भंग न कर दे, अत्यंत ईर्ष्यालु प्रहरी बन वह हमारे बीच घनिष्ठ अंतरंग क्षणों को अपने में आत्मसात् किये रहता था। उसे इस बात का विशेष भय बना रहता था कि उसके मालिक पर किसी अन्य की छाया न पड़ने पाये, मानो उसकी हर धड़कन अपने स्वामी की धड़कन के साथ-साथ चलती थी। हमारे बीच का वार्तालाप स्पर्श से शुरू होता था। मैं उसके बालों को सहलाना शुरू करती, क्योंकि वह उसे अत्यधिक प्रिय था। मेरे स्पर्श करते ही उसके रेशम-से अधिक कोमल सफ़ेद बाल, खड़े होकर थिरकने लगते, जैसे-जैसे मेरे हाथ उसके कानों, आंखों, भौंहों, गरदन आदि के पास बढ़ते जाते वह विश्वस्त हुआ अपने शरीर को ढीला छोड़ता जाता, समुद्र में उठती हुई लहरों की भांति उसका रोम-रोम मेरी ओर बढ़ता जाता, हम दोनों के इस अनुमोदन में समस्त मानवीय बंधन खुल जाते। वह मेरा प्यारा शिशु, सखा, प्रेमी आदि नहीं था, केवल मात्र प्यारा बन्नी, जो स्पर्श-मात्र की अनुभूति में केवल गूंथा जा सकता है।

आप कहेंगे यह कैसा विचित्र संबंध है, आपका एक कुत्ते के साथ ? लेकिन आप थोड़ी देर के लिए मानव और पशु की चेतना शक्ति को भिन्न-भिन्न स्तर पर न रखें। आपने अपने प्रेमीजन के अंतरंग क्षणों में अपने स्पर्श और गंध की संवेदनात्मक शक्ति को, आपकी वाणी को मूक करते अवश्य देखा होगा। शायद एक-दूसरे में खो जाने की तत्परता और शारीरिक मिलन का संवेदनात्मक अंबार

हमारी समस्त चेतना को ऐसे बिंदु पर लाकर रख देता है, जिसमें संवेगों का सैलाब दो पृथक् होने के आभास को एक हो जाने के लिए भ्रमित कर देता है। उस समय फिर स्वयं को आनंदित और प्रियजन को उससे भी अधिक आनंदित करने की इच्छा-शक्ति हमें अत्यधिक उतावला कर देती है, लेकिन ऐसा कुछ दीवानापन हम दोनों के बीच नहीं था। बन्नी की चेतना केवल प्यार भरा दुलार पाने के लिए मेरी ओर बढ़ती, जैसे समुद्र से उत्पन्न हुई लहर, तट की ओर आगे-आगे बढ़ती हुई एक बार ऊंचे उठती और तट पर आ विश्वस्त हुई बिखर जाती, लुप्त हो जाती, अस्तित्वहीन हो जाती, ऐसी ईगोलेस स्टेट (अहं न रहने की मन:स्थिति) बड़े सहज भाव में मैंने बन्नी के साथ गत तेरह सालों में देखी है, उसका अभिनंदन किया है और उसके सच्चे प्रेम से ओतप्रोत होने के कारण ही इस प्राणी की सच्ची कथा को आपको सुनाने बैठ गयी हूं, हो सकता है शब्दजाल के कारण इतनी सादी दो-टूक कथा आपको कोई 'मिस्टिक' अनुभव (गूढ़ एवं आध्यात्मिक रूप से गहन) न लगने लगे, जिसे आप दार्शनिकों के लिए छोड़ दें। दार्शनिक तो अत्यंत बुद्धिमान, तार्किक लोग होते हैं, क्यों वे गृहस्थ जीवन में दो रोटी पर जीने वाले कुत्ते-जैसे एक जीव की मीमांसा करने लगे ? अरे बैठिए, मैं तो बन्नी की बात कर रही हूं, जो अपनी बात मनवाने में दूसरा कोई सानी नहीं रखता। इस कुत्ते का विशेष गुण यह भी था कि वह नवागंतुक का स्वागत बड़े प्रेम से करता था, इसीलिए इसका नाम 'वेलकमिंग डॉग' (स्वागत करने वाला कुत्ता) भइया (मेरे सबसे छोटे भाई) ने रख दिया। अत: वह आपका स्वागत बड़े तहेदिल से करेगा, क्योंकि आपकी रुचि उसमें बढ़ती जा रही है।

अभी तक जितना आप समझ सके हैं उसके अनुसार 'बन्नी' मेरे प्यारे कुत्ते का नाम है। लेकिन यदि आपने मेरे प्रिय बन्नी को देखा,

समझा या कुछ देर के लिए ही पाला-पोसा होता तो आप उसे कुत्ते की संज्ञा देकर उसका अपमान न करते। बन्नी तो बन्नी है, नाहक उसे जाति के कटघरे में खड़ा करके, जातीयतावाद को बढ़ावा दे रहे हैं। वैसे ही हमारे भारत में इस जातिवाद ने भाईचारे के मानवीय संबंधों को कम कर रहा है। आइए, संकीर्णता और जातीयता के दायरे से हटकर मैं आपका परिचय बन्नी से करवाना चाहूंगी, जिसकी शान 'कुत्ता' कह देने से न बढ़ती है, न घटती है। वह तो अपने दिल का मालिक है, और प्यार में अपनी जान तक मालिक पर कुर्बान करता है। आप कहेंगे इसमें क्या विशेषता है! लोग कुत्ता इसीलिए रखते हैं क्योंकि कुत्ता निहायत वफ़ादार जानवर होता है। मालिक दुतकारे भी फिर भी दुम हिलाता हुआ उसके साथ रहता है, लेकिन बन्नी की बात दूसरी है, उसका मालिक बन्नी के साथ-साथ भागता आया और जीवन भर भागता रहेगा। आप कहेंगे क्या मतलब? क्या यह संबंध, रोल रिवर्सल (भूमिका के बदलने) का है?

नहीं, यह कोई असामान्य व्यवहार की चर्चा का विषय नहीं है, इतना आवश्यक है इस बात की बारीकी को समझने के लिए यह मानकर चलना होगा कि कुछ विशिष्ट पात्र, संबंध, परिस्थितियां आदि हमारी स्मृति में इतनी गहराई से समा जाते हैं कि वह व्यक्ति विशिष्ट की चेतना की धरोहर नहीं रखते। वह तो मानवीय चेतना और परामानवीय चेतना का विषय होते हैं। अतः यह चर्चा हमारी और आपकी वार्तालाप का विषय बनकर समाप्त नहीं हो सकती, क्योंकि मेरा विश्वास ही नहीं, यह आत्मचिंतन है कि बन्नी की उपलब्धि मेरे लिए समस्त मानवीय संबंधों के बीच जुड़ी हुई रागात्मक वृत्तियों का अनुमोदन है, जो मेरी तूलिका में झर-झरकर बह रहा है। बन्नी को मैंने कितनी बार पारले के बिस्कुट खिलाये हैं, वह चाव से बार-बार बिस्कुट को लपककर छीनता और खाता और

मांगता जाता, वह क्षणिक सुख हम दोनों की घनिष्ठ अंतरंगता से अधिक क्या कुछ नहीं ? क्या वह वैसा नहीं, जिसे रसखान जी ने वर्णित किया है, "ताहि अहीर की छोहरियां छछिया भर छांछ पै नाच नचावै।" इस भावात्मक संबंध के लिए गोपियों की तरह नाच नचाना आना चाहिए।

कहते हैं कि मिठाई कुत्तों को नहीं देनी चाहिए, क्योंकि मीठा खाने से उनके बाल झड़ जाते हैं और खुजली हो जाती है, लेकिन मीठा खाने से बन्नी को ऐसा कुछ नहीं होता था, वह तो मिठाई बड़े चाव से खाते थे। मीठा खाने में वह मथुरा के चौबे से कम न थे। तीज-त्यौहार पर बनी हुई चीज को बड़े चाव से खाना और मीठे के लिए बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा करना, न मिलने पर उसके लिए रूठ जाना उनका स्वाभाविक गुण था। दीवाली पर उन्हें प्लेट भर मिठाई दी जाती थी, वह छककर खाते थे। लेकिन जब दीवाली की रात को पटाखों की आवाजों से परेशान होते तो चारपाइयों के नीचे घुसते फिरते। दीवाली की सुबह उन्हें तड़के उठकर ही घुमाना पड़ता, क्योंकि हर जगह बुझे हुए पटाखों, फुलझड़ी की महक उन्हें परेशान कर देती थी। वह भागकर बाहर जाते और काम खत्म करते ही घर में वापस आ जाते।

खाने-पीने के मामले में बन्नी का व्यवहार सदा एक-सा नहीं होता था। आम दिनों में वह बड़े नखरे से खाते-पीते थे। लेकिन त्यौहार को वह विशेष उमंग के साथ मानते, होली पर वह गुझियों के सिवा कुछ भी व्यंजन नहीं खाते थे। त्यौहार के बाद खान-पान के मनमौजीपन के कारण बन्नी बीमार भी हुए, लेकिन—मालिक ज़िंदाबाद, वह उनको उतनी ही तन्मयता से निभाता था जैसी मां अपने बच्चे की बीमारी में सेवाएं व दवा-दारू करती है। मालिक करे भी क्या, बन्नी के साथ पाबंदी लगाना आसान काम नहीं था, क्योंकि

बन्नी के अनेक हितैषी रहे हैं। उन्हें खूब पता था कि बन्नी को मीठा पसंद है। अनु को ही लीजिए, उसे घर में चाहे इंग्लैड से आयी हुई चॉकलेट जल्दी-जल्दी न मिलती हो, लेकिन जब भी मिलेगी उसमें से थोड़ा-सा हिस्सा बचाकर वह ज़रूर बन्नी को देने भागी-भागी आती और प्रेम से बन्नी खाकर उसका मन खुश कर देते, यद्यपि चॉकलेट का थोड़ा-सा टुकड़ा बन्नी के मुंह में ऊंट के मुंह में जीरे जैसा होता, लेकिन अनु इतने प्रेम से अपनी मां से चुराकर उसके लिए चॉकलेट लेकर जब आयी है, तो फिर बन्नी उस स्वाद को सौ गुना कैसे न करते ? अनु के किशोर मन में बन्नी की दोस्ती का अंदाज़ आप और हम नहीं लगा सकते, हालांकि अनु को बन्नी का अपनी सुंदर-सुंदर फ्राक पर चढ़ना कतई पसंद नहीं था। लाख बार अनु ने चाहा वह चॉकलेट के टुकड़ों को दूर से फेंककर बन्नी को खिला दे, लेकिन बन्नी उस चॉकलेट को खाकर अनु के सामने उचक-उचककर दस बार अनु के ऊपर चढ़कर थैंक्यू (धन्यवाद) न कह देता तब तक कैसे अनु को वापस जाने दें ? लोग कहते हैं कुत्ते को रोटी का टुकड़ा डालो वह दुम हिलाता आ जायेगा। लेकिन बन्नी कुत्ता थोड़े ही थे, जो दुम हिलाते आ जायें। माना उनको खाने-पीने की चीज़ों से काफ़ी लगाव रहा है, लेकिन वह कौन दे रहा है, कैसे दे रहा है, किस तरह दे रहा है, क्या दे रहा है, इन सब मुद्दों पर गौर करने के बाद ही बन्नी कोई चीज़ खाते हैं। जैसे उन्हें खिचड़ी बेहद नापसंद थी, शायद उन्हें यह शक था कि यह मरीज़ों का खाना है। इसीलिए वे खिचड़ी कभी नहीं खाते थे।

आपद्धर्म में वह अपनी पसंद और नापसंद का सवाल ही नहीं उठाता, वह ऐसे समझौते बड़ी चतुरता से करता था कि उसके मालिक का मन खुश हो जाये। एक बार बन्नी को आपत्काल में खिचड़ी खानी पड़ी, लेकिन वह बात फिर कभी बतलायेंगे। अभी तो बन्नी साहब मेरे

सामने खड़े हैं, अपने सफ़ेद बालों की पूंछ को हवा में इस तरह लहरा रहे हैं जैसे किसी नवयुवक की टाई उड़ रही हो। बार-बार अनुहार कर रहे हैं कि मैं उन्हें बाहर से चलूं, उनकी बात को टाल देना आसान काम नहीं है। मैं उनके साथ उठकर न चल दूं तो वह गुर्राकर मुझे डांटेंगे और फिर भी जब मेरे ऊपर उनकी डांट का असर न पड़े, तो बार-बार चक्कर लगाकर बाहर जाने का रास्ता बतलायेंगे और मेरे पास अपना मुंह रगड़-रगड़कर जैसे कह रहे हों, 'अब चलो'। यदि मैंने भी कह दिया 'चलो' तो बस भागकर दरवाज़े के पास पहुंच जायेंगे और जब तक मैं दरवाज़ा खोलूं वह कई बार मेरे और दरवाज़े के बीच तेज़ी से नाचते रहेंगे। उनकी हर अदा में कहने का अंदाज इतना वज़नी होता है कि उसे अनसुना कर देना आसान नहीं है। आप सोच रहे होंगे यह सब नखरे मालिक उठाता है, इसीलिए कुत्ता कुत्ता न होकर एक शख़्सियत बन गया है जिसका नाम आप बन्नी बता रही हैं।

मुझे बन्नी को लेकर एक बार क्या अनेक बार लखनऊ जाना पड़ा है। लखनऊ की नज़ाक़त और मेहमान-नवाज़ी के चर्चे आपने सुन ही रखे होंगे। लेकिन बन्नी साहब ने वहां जाकर ज़रूरत से ज़्यादा ही नज़ाकत दिखलायी। वह मदरडेरी के ठंडे-ठंडे दूध को पीने के आदी, उन्हें वहां डिब्बे के दूध को झोलकर दिया गया, जिसमें दूध कम और पानी ज़्यादा था। हालांकि उन दिनों दूध के डिब्बे की कमी लखनऊ में ज़ोर-शोर पर थी, शायद बच्चों को मां के दूध की तरह ही डिब्बे के दूध के लिए भी तरसना पड़ रहा था, ऐसे में मेहमानी में आया हुआ यह कुत्ता दिया हुआ दूध नहीं पियेगा, यह एक गुस्ताख़ी थी। बन्नी साहब ने यह दूध पीना क्या, सूंघने से भी इनकार कर दिया। मेहमानों के कुत्ते की इस हरक़त से बच्चे की मां को, जिसने दूध का पाउडर बड़ी तंगदिली से दिया था, बेहद गुस्सा आया। आना भी लाज़िमी था। उसने तो अपने बच्चे के राशन से काटकर यह पाउडर दूध दिया था।

माना कि उसमें पानी ज़्यादा, पाउडर कम था।

उस मां ने फिर बन्नी साहब को नसीहत सिखलाने के लिए बीड़ा उठा लिया। जितने दिनों तक हम लोग लखनऊ रहे, बन्नी को बराबर पानी मिला हुआ पाउडर दूध दिया गया, जिससे मक्खियों ने भी कुछ दिनों बाद भिनभिनाना बंद कर दिया, क्योंकि उसमें दिनोंदिन पाउडर की मात्रा कम होती गयी और बन्नी की हसरत भरी निगाहें कभी भी दूध के लिए ललककर प्याले तक न पहुंचीं। डिब्बे का दूध पिलाने वाली मां की छाती ममता से जल्दी फटती नहीं है, शायद इसीलिए ताव में आकर उस महिला ने बन्नी की दाल-रोटी पर भी पाबंदी लगाना शुरू कर दिया, क्योंकि उसने तो बन्नी को अनुशासित करने का बीड़ा उठा लिया था। वह हर रोज़ बन्नी की रोटी को, बिना असली घी को चुपड़े केवल दाल में सानकर देने लगी। बन्नी साहब उसमें दही, सब्जी और असली घी न देखकर बहुत उदास हो गये, खाना सूंघकर छोड़ देने लगे। एक प्याले में पानी से भरा पाउडर दूध, दूसरे प्याले में सूखी रोटी और कुछ दाल के कतरे दिन-दिन भर पड़े रहते और उस गृहिणी को मजबूर करते कि ऐसा खाना कुत्तों को भी नहीं दिया जाता। ख़ैर, बन्नी साहब ने लखनऊ की मेहमान-नवाज़ी को क़बूल उसी दिन किया जबकि उस महिला की छोटी बच्ची अपनी आइसक्रीम खाते-खाते बन्नी के पास पहुंच गयी। बन्नी ने उस बच्ची को इस तरह से समझाया-बुझाया कि उसने अपनी आइसक्रीम के कप को बन्नी के सामने लुढ़का दिया। बन्नी साहब ने चटपट आइसक्रीम खाकर उस बच्चे को अपने प्यार से आगोश में ले लिया। तब से जब तक हम लोग लखनऊ रहे वह अबोध बालिका रोज़ाना बन्नी साहब को आइसक्रीम खिलाती रही और उसकी मां अपने बच्चे के इस विनोद के कारण फिर अपने सारे अनुशासन की कार्रवाई भूल गयी।

अनुशासन में बंधना बन्नी की प्रकृति के विरुद्ध था, क्योंकि पोमेरेरियन कुत्ते अपने चंचल-चपल व्यवहार में किसी शैतान बच्चे से कम नहीं होते हैं। जिसे बच्चों के नटखट व्यवहार में आमोद मिलता हो, वही इस जाति के कुत्ते को पाले। जिद्द में आ जाये तो मालिक की तौबा-तौबा। बन्नी सुबह उठकर यदि किसी बात से ठन जाये तो दिन भर उदास ? दूध के कटोरे में मक्खियां भिनभिनाती रहेंगी, खाना उनकी सहेलियां गौरैया चुगती रहेंगी, और वह अनशन करे पूरे दिन उपवास करेंगे। मालिक उनके पीछे-पीछे खाने का कटोरा घुमाता फिरेगा, बच्चों की तरह छोटे-छोटे कौर करेगा उनके मुंह में डालेगा परंतु उस समय अन्न-जल कैसे ग्रहण कर सकते हैं ? कान नीचा करके माफ़ी मांग लेंगे लेकिन एक कण भी अन्न का अंदर नहीं जाने देंगे या मुंह भींच लेंगे और ताव आ गया तो गुर्राकर मालिक को डरा देंगे। लेकिन वह किस बात से रूठे हुए हैं यह बात मालिक कैसे जाने ? उनके मनपसंद चीज़ों को सामने रखकर मालिक को लुभाने की कोशिश करनी पड़ती है, क्योंकि भूखे-प्यासे बेज़बान जीव की चिरौरी करने के अलावा दूसरा कोई रास्ता भी तो नहीं है। बन्नी को क्या-क्या पसंद है, इसकी लिस्ट काफ़ी लंबी है परंतु उन्हें मुरमुरा (लाई) खाने की आदत इसी चक्कर में पड़ी। गर्मी के दिनों में जिस दिन बन्नी रूठ जाते, दिन-दिन भर नहीं खाते, खीझकर उनका रोज़ा तोड़ने के लिए उनके सामने थोड़ा-सा मुरमुरा डाल दिया जाता, जिसे वह बड़े चाव से सफाचट करके ठंडा पानी पीते। नतीजा यह हुआ कि बन्नी का शाम का नाश्ता मुरमुरा ही हो गया है, मानो उनका मालिक मुरमुरा खिलाने का आदी हो गया और जब भी बन्नी मुरमुरा सूंघकर छोड़ दे तब जानिए कि वह सख़्त बीमार है। पता लगाने के लिए मालिक को पूछताछ करने की फिर कोई ज़रूरत ही नहीं पड़ती। चालाकी में वह ख़रगोश की तरह था, मानो नाम का असर हो। पड़ोस में मिसेज

रमैया उन्हें खेत से गाजर निकालकर धोकर देती, लेकिन यदि गाजर कोई अन्य निकालकर बिना धोये उन्हें दे देता तो वह उसे नहीं खाते, इंतज़ार करते रहते कि गाजर धोकर दी जाये, अवश्य वह अच्छी तरह जानते थे कि मिसेज़ रमैया यह काम अपनी निगरानी में ज़रूर करवायेगी, फिर उनकी गाजर कहां जाने वाली थी ?

बैठिए, मैं बात कह रही हूं जो घर की रखवाली में अपना सानी नहीं रखता, वह अपनी और स्वामी की सुरक्षा-सीमा बड़ी कुशलता से निर्धारित करता आया है। घर पर एकच्छत्र अधिकार होना कुत्ता होने के कारण उसका प्राकृतिक गुण था। किसी के आने पर उसकी गंध मात्र से चौकन्ना होना, घंटी बजने से पहले भौंककर स्वामी को सचेत कर देना तो उसका जन्मसिद्ध अधिकार था, लेकिन सुरक्षा परिधि की चौकी बनाकर नाकाबंदी बन्नी जो करते थे, वह देखने-सुनने में जल्दी नहीं आती है।

एक बार मैं रेल से यात्रा कर रही थी। बन्नी घर के अन्य सदस्यों के साथ मुझे रेलवे स्टेशन छोड़ने आये हुए थे, रेलगाड़ी जैसे ही प्लेटफ़ार्म छोड़ने लगी, बन्नी साहब कूदकर डिब्बे में आ गये। उस सेकेंड क्लास के खचाखच भरे डिब्बे में बन्नी को अपनी गोद में बिठा लेने के अतिरिक्त कोई विकल्प न था। उसे अपने साथ ट्रेन में न ले जाया जा सकता था, न ही उसे उतार सकना संभव था। बन्नी मेरी विवशता को समझकर ग्लानि से भर गये और सहमकर मेरी गोद में छिप गये। ट्रेन ने गति पकड़ ली।

नज़दीक बैठे सहयात्री के बच्चे उस सफ़ेद रंग के बड़े बालों वाले सुंदर कुत्ते को गोद में बैठा देखकर, विशेषकर उसकी बालहठ की विजय पर उसे शाबाशी देने के लिए मेरे समीप आ गये। बच्चों की मां कुत्ते के प्रति बढ़ते हुए अपने बच्चों के इस आकर्षण से सशंकित हो उठी, बच्चे फिर भी मां की अवहेलना करते हुए बन्नी के बालों को छूने

लगे। बन्नी एक चीनी के बने कुत्ते की तरह उन बच्चों के साथ कभी अपने बालों को सहलवाते, पूंछ पकड़वाते या पूंछ, कान आदि मरोड़ने देते। यहां तक कि बच्चों ने दांतों तक में अपनी अंगुली डाल दी और बन्नी ने चूं तक न की। बच्चों और कुत्ते के बीच होते इस खिलवाड़ ने सह-यात्रियों को पूरी तरह विश्वस्त कर दिया कि यह पालतू कुत्ता है, जिसको अच्छा प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) मिला हुआ है। थोड़ी देर में सबके मुंह से इस कुत्ते की प्रशंसा होने लगी। कुछ एक ने प्यार से उसका नाम भी पूछा। अपना नाम सुन-सुनकर और विशेष प्रेम भरा बच्चों का सहवास पाकर, बिना टिकट लिये बन्नी साहब उस डिब्बे में यात्रा करते समय अपने आपको टिकट लिये हुए यात्रियों से अधिक गर्वीला महसूस करने लगे, लेकिन मेरा मन अनेक शंकाओं से भरा हुआ था। थोड़ी देर में टिकट कलेक्टर आयेगा, कुत्ते को डिब्बे में बैठा देख वह मेरी और बन्नी दोनों की यात्रा को संकटमय कर देगा।

गाड़ी की रफ़्तार अब काफ़ी तेज हो गयी और अब बन्नी खेलने के बाद अपना सिर खिड़की के बाहर किये मेरी गोद में बैठे बाहर का नज़ारा देख रहे थे। सह-यात्री लोगों का कुत्ते की क्रिया-कलापों से मन भर चुका था, बच्चे अवश्य उसका ध्यान खिड़की के बाहर से हटा कर अपनी ओर लगाने के लिए बीच-बीच में कुछ करने लगते थे। बन्नी उनके साथ कभी हाथ मिलाते, कभी प्यार से अपना पंजा उन्हें देते या पास आने पर उचककर उनके मुंह को चूमना चाहते लेकिन मेरी गोद को छोड़कर उनके पास नहीं जाते। वे स्वामी की मन:स्थिति जानने के कारण चीनी के कुत्ते की तरह गोद में बैठे रहने के लिए कटिबद्ध थे।

जिसकी मुझे काफ़ी देर से शंका थी वही हुआ। टी० टी० चेकिंग के लिए डिब्बे में आया। इतने खचाखच भरे द्वितीय श्रेणी के डिब्बे में सबके टिकट चेक करना संभव न था, सब पर सरसरी निगाह

डालकर उसकी निगाहें मेरी ओर आकर रुक गयीं। एक आधा टिकट देखने के बाद वह मेरी बेंच पर आकर बैठ गया और गुस्से में बोला, "यह किसका कुत्ता है ? इसे आम सवारियों के साथ किसने बिठाकर रखा है।"

मैंने काफ़ी अनुनय-विनय की, विस्तार में बतलाया कि किस परिस्थिति में यह कूदकर प्लेटफ़ार्म से मेरी गोद में फांद आया, कहें तो इसके लिए वह एक पूरे टिकट के पैसे लेकर टिकट बना दें। मेरी विनीत प्रार्थना का उस टी० टी० पर कुछ असर न होना था। उसने मुझे सुझाव दिया, "आप अच्छा हो, अगले स्टेशन पर उतरकर अगली यात्रा स्टेशन मास्टर की परामर्श द्वारा करें क्योंकि रेलवे के अनुसार द्वितीय श्रेणी के यात्री अपने कुत्ते के साथ यात्रा नहीं कर सकते। ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जिसके अंदर इस कुत्ते का टिकट बनाया जा सके।" यह कहकर टी० टी० चेकिंग करने के लिए दूसरे डिब्बे में चला गया।

बन्नी साहब चुपचाप चीनी के कुत्ते बने मेरी गोद में आराम से बैठे थे। मेरी अवस्था शोचनीय थी। समझ में नहीं आ रहा था कि गोमती जैसी तीव्रगामी ट्रेन से उतरकर किस तरह मैं उसके गंतव्य स्थान लखनऊ तक आज की तारीख़ में पहुंच पाऊंगी ? वहां मैं एक आवश्यक सरकारी कामकाज से जा रही थी। कल सुबह पहुंचना आवश्यक था। गोमती लखनऊ करीब रात के 10.30 बजे पहुंचती है। इसे छोड़कर तो किसी भी हालत में लखनऊ नहीं पहुंचा जा सकेगा। कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि क्या किया जाये ? बन्नी ने अपने एकाधिकार की नाकाबंदी में मुझे भारतीय रेल के नियमानुसार अपराधी बना दिया था, उतरना मेरे लिए संभव न था। अतः दुबारा टी०टी० के आने पर उसके कोप का भाजन बनने के अतिरिक्त मेरे पास दूसरा कोई विकल्प न था। पास में बैठे एक सह-यात्री ने मुझे

सलाह दी, "बहन जी, आप टी० टी० को कुछ रुपये-पैसे देकर शांत कर दीजिए।"

"लेकिन वह कुत्ते का टिकट बनाकर नहीं देगा। ऐसी हालत में मैं इसे लेकर कैसे लखनऊ के प्लेटफ़ार्म से बाहर जा सकूंगी ? बाहर निकलने के लिए मेरे पास पार्सल की रसीद होना ज़रूरी है।" मैंने प्रतिवाद किया।

"वह तो सही है, लेकिन अगले स्टेशन उतरने का चक्कर तो टल जायेगा।" सहयात्री लगता था, टी० टी० के बारे में रोज़मर्रा सफ़र करते रहने के कारण अच्छी-खासी जानकारी रखता था।

मेरी गति सांप, छछूंदर की-सी थी। मुझे टी० टी० को घूस देकर चुप कराना बड़ा अटपटा लग रहा था। मुझ जैसी भद्र महिला द्वारा घूस का प्रस्ताव सुनकर वह सशंकित हो मेरा अपमान न कर बैठे ! मेरा भी किसी सरकारी पदाधिकारी को घूस देने का यह प्रथम प्रयास था। वैसे मुझे किसी को भी घूस देने की आज तक ज़रूरत नहीं पड़ी थी। मुझे लगा विपत्ति आने पर ही आपके नैतिक मूल्य क्या हैं, इसकी परीक्षा होती है। जब आज तक घूस न लेने के, न देने के सिद्धांत पर अडिग रही हूं तो इस विपत्ति में क्यों अपने मूल्यों को ताक में रख दूं ? इस नादान कुत्ते ने मुझे धर्मसंकट में डाल दिया है। कैसे इस मुसीबत से निकल पायेंगे। मैं इसी पसोपेश में, तर्क-वितर्क मन-ही-मन करती रही और ट्रेन की गति पहले से भी अधिक तेज होती गयी। शायद शीघ्र इटावा शहर का स्टेशन आने वाला था। बन्नी के सिर के सारे बाल हवा में तार-तार हुए झूम रहे थे। वह मुझे अपनी गोद में बैठा बड़ा संतुष्ट लग रहा था। इसके सान्निध्य के इस सुख ने मुझे संकट की परीक्षा में टी० टी० का दृढ़ता के साथ सामना करने की प्रेरणा दी। मैं चुपचाप बन्नी की ओर देखती रही। दोनों ने आंखों ही आंखों में कुछ कहा-सुना, इतनी देर में टी० टी० साहब वापस आ गये

थे। उन्होंने कठोर भर्त्सना भरे शब्दों में कहा, "जानवर का क्या ठिकाना, यह किसी भी वक्त कुछ कर सकता है। आप क्या कर सकती हैं यदि यह किसी को काट ले, आप तो 'सारी' (क्षमा) कहकर अलग हो जायेंगी, ज़िम्मेदारी तो टी० टी० की है। इटावा का स्टेशन आने वाला है। आप अपना सामान लेकर उतर जायें, वहां गाड़ी थोड़ी देर रुकती है।"

मैंने प्रतिवाद किया, "टी० टी० साहब, यह मेरा पालतू कुत्ता है। इसको इंजेक्शन आदि सब लगे हुए हैं। इसने आज तक किसी को भी नहीं काटा है, आप इस पर पूरा भरोसा रखें। मैंने आपको पहले ही बतलाया है कि किन परिस्थिति में यह मेरे पास कूदकर आ गया। चलती गाड़ी से इसे प्लेटफ़ार्म में अकेला कैसे छोड़ती? कृपया आप इसे मेरे गंतव्य स्थान लखनऊ तक जाने की अनुमति दें, जिस तरह का भी टिकट बनना संभव हो बना दें। इटावा उतरकर लखनऊ के लिए किसी भी तीव्र गति की गाड़ी अब मिलना संभव न होगा, जो निर्णय स्टेशन मास्टर करेंगे वह कृपया आप ले लें। मुझे सरकारी कामकाज से कल सुबह तक लखनऊ पहुंचना ज़रूरी है।"

"हर यात्री रेलवे में किसी ज़रूरी कामकाज के सिलसिले में व्यस्त होकर ही जाता है।" टी० टी० ने रुखाई से कहा।

"लेकिन सब बातों की जानकारी के बाद भी आप अपना निर्णय बदलने के पक्ष में नहीं हैं क्या?"

"आपकी सब बातें मैं सुन-चुका हूं। यदि यह कुत्ता किसी को काट लेगा तो वह मेरी ज़िम्मेदारी होगी। इसलिए आप फ़ौरन इसे लेकर अगले स्टेशन पर उतर जाने की तैयारी कीजिए।" कहते हुए टी० टी० ने मेरा सूटकेस उठाकर मेरी तरफ़ बढ़ाया।

चीनी से बने बन्नी में एकाएक रौद्र रस का संचार हो गया, वह सहन न कर सका कि उसके मालिक का सूटकेस कोई अन्य व्यक्ति छू दे,

चाहे वह भारतीय रेलवे का टी० टी० ही क्यों न हो। गोद से कूदकर वह तनकर खड़ा हो गया और लगा भौंकने, अन्य सहयात्री इस तमाशे को देखने हमारे कोच की बेंच के पास आ गये। एक ने फ़ब्ती कसी, "अरे टी० टी० साहब, यह कुत्ता हमारे साथ दिल्ली से यहां तक चुपचाप बैठा हुआ यात्रा करता आया। बच्चों ने इसकी पूंछ तक मरोड़ी, कान पकड़े, लेकिन इसने चूं तक न की। लेकिन आपको देखते ही इसने भौंकना शुरू कर दिया। क्या माजरा है, जानवर भी आदमी को पहचानते हैं, सुना था, आज देखा।" कई यात्री एक साथ हंसने लगे थे।

टी० टी० साहब तैश में बोले, "आप कौन होते हैं इस मामले में अपनी टांग अड़ाने वाले ? मालूम है इस तरह के यात्री-डिब्बे में जानवर ले जाना सख्त मना है।"

"लेकिन टी०टी० साहब, यदि यह महिला अपने इस कुत्ते के साथ फर्स्ट क्लास में सफ़र कर रही होती तो आपको कोई एतराज़ न होता।" राजनीतिक ढंग के कपड़े पहने एक नवयुवक ने दृढ़ता से कहा।

"हां, वहां फर्स्ट क्लास का टिकट बनवाया जा सकता है यदि कोई महिला अपनी सुरक्षा के लिए अपने पालतू कुत्ते को साथ रखना चाहती है और अन्य सह-यात्रियों को इस बात से कोई एतराज़ न हो।"

"परंतु साहब, यहां भी इस कुत्ते को बैठने में किसी को एतराज़ नहीं है। यह कुत्ता पालतू ही नहीं, बड़ा शानदार है। बच्चों से बिलकुल हिल-मिल गया है। ये महिला बिलकुल अकेली यात्रा कर रही हैं। रेलवे कर्मचारी को फर्स्ट क्लास और सेकेंड क्लास में इतने भिन्न-भिन्न नियम नहीं बनाने चाहिए, मालिक के लिए कुत्ता उतना ही प्यारा जानवर है जितना वह फर्स्ट क्लास के यात्रा करने

वाले ..."

"आप राजनीतिक युवक लोग विधान सभा में जाकर यह नियम-क़ानून ठीक करवायें। कृपया मुझे अपना काम करने दें।" एक-एक करके अनेक यात्रियों ने टी० टी० से बन्नी की पेशकस की, लेकिन वह कुछ सुनने-सुनाने को तैयार नहीं थे, उन्हें आशंका होने लगी थी कि इन्हीं सह-यात्रियों के सहयोग के कारण मैं अगले स्टेशन पर उनकी बातों को अनसुना करके उतरूंगी नहीं। अंतिम बार उन्होंने मुझे चेतावनी देते हुए कहा, "देखता हूं कि ये लोग किस तरह आपको इस कुत्ते के साथ बैठने देते हैं, अगले स्टेशन पर यदि आप उतरीं नहीं तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा।"

एक वृद्ध पुरुष ने टी० टी० को सलाह दी, "अरे साहब, नाहक तिल का ताड़ बना रहे हैं। यह कुत्ता किसी को भी काटेगा नहीं, मैं गारंटी देता हूं। आप जिस तरह का भी टिकट बन सकता है, कृपया महिला को बनाकर दे दें।"

"मैं फर्स्ट क्लास का टिकट लेने को तैयार हूं, लेकिन आपको इटावा से लखनऊ तक के अंतर के अनुसार मेरा सेकेंड क्लास के टिकट पर कुत्ते का फर्स्ट क्लास का टिकट बनाकर रसीद देनी होगी, क्योंकि उसे दिखाकर ही मैं इस कुत्ते के साथ लखनऊ प्लेटफ़ार्म से निकल पाऊंगी।" मैंने भी अपनी स्वीकृति देने के लिए कहा।

"मैं तो आपको यहां बैठकर फर्स्ट क्लास का कैसे टिकट बनाकर दूंगा? मैं तो आपको इस कुत्ते के साथ अपने डिब्बे में बैठने की इजाज़त नहीं दूंगा। इसीलिए आपसे कह रहा हूं कि आप स्टेशन मास्टर से मिलें या आपका जो मन चाहे वह अगले स्टेशन पर उतर कर करें।" टी० टी० अडिग था।

टी० टी० की चखचख से सब परेशान थे। एक ने दयानुभूति से कहा, "टी० टी० साहब, आप अपना समय नाहक बरबाद कर रहे हैं,

यह महिला इतनी तेज़ गोमती ट्रेन से उतरकर इस कुत्ते और सामान को लेकर कैसे फर्स्ट क्लास का टिकट बनवाती फिरेंगी ? कुछ-न-कुछ तो देकर इनका फ़ैसला कर दें ।"

"आप बीच में न कूदें । मैंने एक दफ़ा जो फ़ैसला दे दिया सो दे दिया । उसे अमल करने में आप लोग इन महिला की मदद करें ।"

"क्या बात करते हैं टी० टी० साहब, चलती ट्रेन में सफ़र करते समय हम लोग कैसे इस महिला की मदद कर सकते हैं ? आप ही इनकी मदद कर सकते हैं । आप तो सरकार हैं ।"

यह सुनकर टी० टी० साहब का अभिमान चरम सीमा तक पहुंच गया । दर्प में वह यह भी भूल गये कि इस चलती गाड़ी में कोई भी टस से मस नहीं होने वाला था, हर व्यक्ति केवल अपनी ज़बान चलाकर या तर्क शक्ति से समस्या को सुलझाने के लिए अपने-अपने मौलिक सुझाव दे रहा था । युवा राजनीतिक ने सुझाव दिया, "अगले सत्र में यह मसला उठवाना चाहिए कि भारतीय रेल में अंग्रेज़ों के बनाये गये क़ानूनों की पाबंदी क्यों की जाती है ? थर्ड क्लास तो चला गया जिसमें महात्मा गांधी जी यात्रा करके जनमानस को समझाते-बुझाते थे, लेकिन स्वतंत्र भारत में कुत्ते जैसे वफ़ादार जानवर के लिए हमारे द्वितीय श्रेणी के डिब्बे में चलने की सुविधा नहीं दी गयी है, जबकि प्रथम श्रेणी में उसे यह अधिकार प्राप्त है ।"

"बस-बस, नेता जी । क़ानून की ये बातें कृपया विधानसभा में कीजिए, सरकारी कामकाज में रोड़ा लगाना अच्छी बात नहीं है ।"

"अरे टी० टी० साहब, गुस्सा थूकिए, हम लोग लंबी यात्रा में बैठकर ही जनता की सुविधा-असुविधा पर चर्चा कर सकते हैं । कौन रेल अफ़सर कितना घूस...छोड़िए, देखिए, यह कुत्ता शांत

बैठा है ।"

यह सुनकर टी० टी० साहब गुस्से से तनकर अपनी रसीद बुक खोलते हुए बोले, "निकालिए अपना टिकट ।"

टी० टी० को गुस्से से भरा देखकर बन्नी साहब ने समस्या समाधान होने के बजाय उसे और अधिक उलझाकर रख दिया। वह तुरंत मेरी गोद से उतरकर टी० टी० के सामने सीना ताने भौं-भौं करके गर्जे । उनकी बुलंद आवाज़ गोमती जैसी तीव्रगामी ट्रेन में प्रतिध्वनित होने लगी। टी० टी० साहब कुत्ते की इस अनोखी ललकार का सामना करने में समर्थ न थे। वह वहां से तुरंत भाग खड़े हुए और लखनऊ तक की शेष यात्रा में उस डिब्बे में लौटकर नहीं आये। इस तरह बन्नी की इस अनोखी सूझबूझ ने मेरी जान बचायी, नहीं तो इटावा उतरकर फर्स्ट क्लास में जाने के सिवा दूसरा कोई चारा न था, टी० टी० को भी अच्छा सबक मिला था ।

कुत्ते किसी भी हालत में किसी को अपने मालिक पर क्रोध करने का अधिकार नहीं देते हैं, चाहे क़ानूनी दृष्टि से उसका मालिक अपराधी क्यों न हो। इसी तरह बन्नी मुझे कभी रोने भी नहीं देते थे, जब कभी भी मेरी मां की बीमारी की चिट्ठी आती और मुझे लखनऊ बुलवाया जाता, मैं उस पत्र को पढ़ते-पढ़ते रोने लगती । बन्नी भागकर मेरी गोद में बैठ जाते और मुझे रोने नहीं देते थे। मनुष्य की संवेगात्मक स्थिति में जैसे क्रोध, कलह, ईर्ष्या, भय, क्षोभ आदि में एड्रिनल ग्लैंड को अतिरिक्त काम करना पड़ता है, उस अतिरिक्त स्राव को कुत्ता सूंघ लेता है और स्वयं उत्तेजित हो जाता है, इसीलिए भयभीत मनुष्य के पीछे कुत्ता पड़ जाता है ।

बन्नी को रेलवे यात्रा में अनेक कठिनाइयां हुईं और उनके संस्मरण भी अजीबोग़रीब हैं, उनकी चर्चा जब उठी है तो आपको यह बताना आवश्यक है कि कुत्ते के बारे में रेलवे के कानून को रेलवे का

हरेक कर्मचारी एक जैसा लागू नहीं करता। एक सुंदर पोमेरेरिन कुत्ते को देखकर ताज जैसी वी०ई०पी० ट्रेन का गार्ड भी गाड़ी रोक सकता है। आप कहेंगे यह कैसी अनहोनी बात सुना रही हैं, पर यक़ीन मानिए, यह बन्नी की रेल यात्रा की सच्ची घटना है जबकि वे आगरे जा रहे थे, उस दिन गार्ड के डिब्बे में बैठने का सौभाग्य मुझे बन्नी की वजह से मिला था।

नयी दिल्ली स्टेशन के प्लेटफ़ार्म में जैसे ही मैं टिकट लेकर बन्नी के साथ पहुंची कि ट्रेन ने सीटी दे दी। ताज एक्सप्रेस छूट रही थी धीरे-धीरे, और मैं बन्नी का स्टेप पकड़े ट्रेन पकड़ने की कोशिश कर रही थी, लेकिन थोड़ी देर में गाड़ी ने रफ़्तार पकड़ ली, बन्नी का स्टेप मेरे हाथ से खिसक गया, अब गाड़ी मिलना असंभव था। बन्नी साहब मुझसे अलग हो गये थे और तेज़ी से गाड़ी की दिशा में भाग रहे थे, जैसे वह मुझे असहाय होना सहन न कर पा रहे हों। भाग्य से गार्ड साहब ने हरी झंडी दिखलाते हुए एक सफ़ेद छोटे कुत्ते को बेतहाशा अपनी ओर भागते हुए देख लिया और पीछे-पीछे उसके हताश मालिक को, जो अपने प्रिय कुत्ते की द्रुत गति की छलांगों को रोकने के लिए कुत्ते के स्टेप को पकड़ने के लिए परेशान हो रहा था। इस दौड़-भाग का नतीजा एक अनोखी सुखद घटना में एकाएक बदल गया। ताज एक्सप्रेस कुछ दूर जाकर रुक गयी या कहिए कि गार्ड साहब ने बन्नी के लिए रोक दी। बड़े प्रेम से उन्होंने हम दोनों को अपने डिब्बे में बिठाने की कृपा की। गार्ड साहब की कुत्ते के साथ मित्रता मुझे देखने को मिली। रास्ते भर बन्नी उनसे खेलते-खाते आये और राजामंडी में मेरे साथ उतरकर प्लेटफ़ार्म से बाहर खरगोश के सींग की तरह गायब हो लिये, प्लेटफ़ार्म पर किसी ने उनका टिकट भी नहीं पूछा। बन्नी का ताज एक्सप्रेस को रुकवाना मेरे लिए एक सुखद-स्मृति ही नहीं वरन् इस बात की द्योतक है कि एक मूक प्राणी अपने साहस भरी स्वामिभक्ति

और निष्ठा से प्रेरित होकर क्या नहीं कर सकता ?

प्रेम मानव जाति की उदार भावनाओं की सहज प्रक्रिया रही है। उस प्रेम में मनुष्य ने कितनी बार हिंसा की लड़ाई लड़ी, मर्यादाओं का उल्लंघन किया, छल में व्यापार, बलात्कार और आत्महत्या भी कर डाली, किंतु जानवर ने मनुष्य से जब भी प्रेम किया केवल प्रेम किया, जिसका आनंद हम जीवधारियों को प्रेम के सूत्र में बांधकर रख देता है। संसार के हर कोने में कुत्ते को मनुष्य का सच्चा और बेहद वफ़ादार जानवर कहा गया है। आदि मानव ने गृहस्थी बसाने के लिए इस जीव को अपने साथ कुछ सोच-समझकर ही रखा होगा, क्योंकि मनुष्य के सब ही रिश्तों में जैसे प्रेमी-प्रेयसी, पति-पत्नी, सखा-सखि में प्रेम के अलावा मनुष्य की स्वार्थ निहित भावनाओं द्वारा किसी-न-किसी का शोषण सुनने में अवश्य आया है, केवल जानवरों के प्रेम करने में मनुष्य शोषित नहीं हुआ है, इसका क्या कारण है ? शायद मानव की बुद्धि और उससे परे उसका अहंकार और अपने प्रभुत्व की अभिलाषा, प्रेम, समर्पण, विश्वास आदि जैसी उदात्त भावनाओं पर अंकुश लगा देती है। प्रेम की परिणति में मनोवैज्ञानिक सैडिज्म (क्रूरता में रत्यानंद की) जो बात करते आये हैं वह पशु-प्रेम में कहां दिखलाई देती है ? अन्य जीवधारियों की अपेक्षा मनुष्य शायद अपने नारसिज़्म (आत्मरति) से ऊंचे उभर नहीं पाता, लेकिन बुद्धि विकास कम होने के कारण जानवर अपने सैडिज़्म को केवल अपनी जीवन-रक्षा हेतु ही प्रयोग में लाता है। अपनी चेतना के ऊर्ध्वारोहण के लिए योगी-पुरुषों ने अहंकार, बुद्धि और महत् को ईश्वर में विलीन करने की साधना की, लेकिन प्रेम में पशु तो उसे सहज ही मनुष्य रूपी अपने मालिक को समर्पित कर देता है। ऐसा आभास मुझे बन्नी के सहवास में सहज ज्ञान के रूप में मिला। ख़ैर, अभी तो चर्चा रेल-यात्राओं की है।

भारतीय रेल में यात्रा करने के लिए बन्नी को पार्सल ऑफ़िस में सुपुर्द करना होता, वहां उसके नाम, पता आदि लिखकर गले में लटकाया जाता तथा बुकिंग होने के बाद कुली पार्सल डिब्बे में बने कुत्तों के बक्से में खाना-पानी आदि सहित कुत्ते के मालिक द्वारा अपनी निगरानी में रखवाकर एक रसीद मालिक के बिल्टी कटवाने के लिए देता। दूसरी रसीद रेलवे के पास रहती अत: बन्नी के लिए रेल-यात्रा अनेक आशंकाओं से भरी होती। मालिक के साथ रेलवे स्टेशन पहुंचते ही वह भयभीत हो जाता, कहीं कुली उसका सामान न ले जाये। कहीं मालिक आगे-पीछे न हो जाये। कोई कुत्ता उस पर आक्रमण न कर दे। कुली उसे लेकर न भाग जाये आदि। मानो वह सोने के कुत्ते हैं और मालिक उनका नादान अकेला जिसकी आंखों में कोई भी धूल डाल सकता हो। चालाकी में बन्नी किसी सयानी लोमड़ी से कम न थे, उन्हें कुत्ते के बक्से में बंद करना हर यात्रा में मेरे लिए हादसों में भरा दु:खद अनुभव सिद्ध हुआ।

अक्सर गार्ड का डिब्बा पार्सल डिब्बे के बाद होता है, एक दफ़े कुत्ते का बक्सा गार्ड के डिब्बे के अंदर था। मैं जब बन्नी को लेकर बॉक्स के भीतर बंद करवाने कुली के साथ पहुंची तो गार्ड साहब भी वहां मौजूद थे। बन्नी किसी हालत में बॉक्स के भीतर घुसने के लिए तैयार न थे, जैसे ही मैं उन्हें भीतर करके किवाड़ बंद करना चाहती, वह मुंह निकालकर बाहर कर लेता है और फिर आसानी से अपना सारा शरीर बाहर ले आता। मेरी समझ में नहीं आ रहा था इसे किस तरह से बंद करूं? यदि ज़ोर-ज़बर्दस्ती करती तो उसके सिर पर चोट आने का खतरा था। दयालु गार्ड को उसकी बालहठ देख पास पड़ी बेंच पर चेन द्वारा बन्नी को बांध देने की अनुमति देनी पड़ी, लेकिन तब तक ट्रेन का टाइम हो चुका था। वहां से अपने आरक्षित स्लीपर कंपार्टमेंट में पहुंचना असंभव था, अत: बन्नी के साथ बैठने की मुझे भी

अनुमति थी। हरदोई तक जाड़े की रात में बेंच पर बैठे-बैठे आना पड़ा और हरदोई में गाड़ी रुकने पर अपने डिब्बों को खोजते-खोजते मेरा सारा शरीर थकान से चकनाचूर था। मैंने अपने आपको, बन्नी को कुत्ते के बक्से के भीतर कर सकने में असमर्थ पाया, जबकि मुझे पता था कि सबके कुत्ते पार्सल द्वारा रेल-यात्रा इन्हीं बक्सों में बंद होकर करते हैं, वहां खाना-पीना भी होता है और वह सोते-सोते आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान पहुंच जाते हैं, फिर बन्नी को इस बक्से में बंद होने में क्यों इतनी अधिक परेशानी, जैसे मैं एक जघन्य अपराध कर रही हूं जो मेरा प्यारा कुत्ता मुझे कदापि नहीं करने देगा? मैंने निश्चय किया कि मैं स्वयं भविष्य में इसे कुत्ते के बाक्स में बंद करने नहीं आऊंगी।

मेरा यह निश्चय घर वालों के सामने न टिक पाया। उनका कहना था कि रेल-यात्रा में जितना अधिक सुविधाजनक प्रबंध कुत्तों के बक्से में होता है, वह पार्सल किये हुए अन्य जानवरों को कहां मिलता है? मालिक अपने गंतव्य स्थान से पार्सल से बुक करा देता है और पहुंचकर कुत्ते को साथ ले जाते हैं, मालगाड़ी से कुत्ता नहीं भेजा जाता फिर क्या परेशानी है? थोड़ी परेशानी कुत्ते को बॉक्स में बंद करने में होती है, लेकिन इस बारे में यदि ज्यादा सोचा-समझा न जाये तो कुत्ते की थोड़ी देर की परेशानी के खयाल से तुम अपनी रात की यात्रा को रिजर्वेशन (आरक्षण) होते हुए भी बैठे-बैठे क्यों बरबाद करो? उनके तर्क अकाट्य थे, लेकिन बन्नी का बक्से में न बंद होने का दुष्प्रयास, रोना-धोना, घबराकर भयभीत होना आदि मेरे मन-प्राण पर छाया रहता। मुझे पता था कि उस बक्से में वह बंद होकर अन्न-जल ग्रहण करना क्या, पूरी रात बाहर निकलने के असफल प्रयास करता रहेगा और रोते-रोते अधमरा-सा हो जायेगा।

इन्हीं दु:खद बातों को याद कर मैंने लखनऊ मेल से दिल्ली आते

समय दु:साहस करके बन्नी को लेडीज कंपार्टमेंट के स्लीपर में सबसे ऊंचे बर्थ पर सहयात्रियों से परामर्श लेकर दुबकाकर अपने साथ सुला लिया। बीच के एक स्टेशन पर कुछ यात्री उतरे और एक बूढ़ी महिला अपने पोता-पोती सहित लेडिज कूपे में आयी। इस शोर-शराबे में बन्नी भी चौकन्ने होकर बैठ गये। उसे देख वृद्ध महिला परेशान हो उठी कि कहीं सोते-सोते ऊपर से कुत्ता उनकी बर्थ को गीला न कर दे। अन्य सहयात्रियों ने मेरा साथ दिया और उन मां जी को कई बार समझाया कि कुत्ते जहां सोते-उठते-बैठते हैं वहां कभी भी गंदा नहीं करते। कुत्ते बच्चों की तरह सोते-सोते सू-सू नहीं करते किंतु पोते-पोती वाली वृद्ध महिला कैसे विश्वास कर लेती ? रात में दुबकाकर बन्नी को अपने पैरों के पास सुलाये रखने के अलावा दूसरा कोई रास्ता न था। मुझे पता था कि टिकट कलेक्टर स्लीपर में सोये हुए यात्रियों को असुविधा न हो, अतः चेकिंग करने न आने वाला था। इस तरह बन्नी साहब रात भर सोते हुए आराम से आये और सुबह होने पर भी उन्होंने बाहर जाने के लिए मुझे परेशान न किया, जैसे वह चीनी के बने कुत्ते हों। सुबह वे मेरे साथ नीचे की बर्थ पर आ गये। शौचालय जाकर मैंने उन्हें भी निवृत्त करवाने के लिए प्रयास किये लेकिन चलती ट्रेन में अत्यधिक सावधान रहने के कारण वे कुछ कर न पाये। हम दोनों नीचे की बर्थ पर उसी वृद्ध महिला के सामने बैठ गये। थोड़ी ही देर बाद बन्नी साहब उसके पोता-पोती से हिल-मिलकर खेलने लगे। बच्चों को आनंदित देख दादी का हृदय स्नेह से द्रवित हो उठा। वह भी बन्नी की प्रशंसा करने लगी, "ये तो बड़ा कहना मानने वाला कुत्ता है, मैंने कुत्ते को बच्चों की तरह रखते हुए नहीं देखा है। किन्हीं बातों में यह बच्चों से भी अधिक अनुशासित है।" निःसंदेह उनका इशारा रात में अपनी शंका की ओर था। पोते-पोती के साथ-साथ खाने-पीने की चीजें दादी जी ने बन्नी को भी दीं। हमारी

रेल-यात्रा सार्थक रही, क्योंकि प्राणी मात्र से स्नेह करने की भारतीय परंपरा का इससे अच्छा क्या उदाहरण हो सकता था ? जवान, बच्चे, बूढ़े, कुत्ता आदि सब भारतीय रेल में प्रेम में पगे यात्रा कर रहे थे।

रेलगाड़ी तो बिछुड़े हृदयों को मिलवाने और सगे-संबंधियों को दूर करवाने के लिए प्रसिद्ध है। आपने प्लेटफ़ार्म पर कितने लोगों को मिलन के क्षणों में हृदय से लगाते और विदा करते समय अपनी आंखों के आंसुओं को पोंछते हुए देखा होगा, लेकिन इसी रेलगाड़ी ने एक बार बन्नी को जितना अधिक संवेगित किया, वह भगवान् न करे किसी अन्य को कभी होना पड़े। आप कहेंगे यह भी कोई बात हुई, भारतीय रेलगाड़ी देश को एक कोने से दूसरे कोने तक मिलाती है। कितने ही मनुष्य, स्त्री, बच्चे आदि यात्रा करते समय हादसों के शिकार होते हैं। ट्रेन में दुर्घटनाएं भी होती हैं, आजकल तो बम विस्फोट होना, आग लग जाना आदि हृदय-विदारक समाचार सुनने को मिलते ही रहते हैं। जिस यात्रा में मानव की आहुति हो जाने की संभावना हो, वहां अन्य जीवधारी के लिए इतना अधिक संवेगित होने की क्या जरूरत है ! लगता है मैं जरूरत से ज़्यादा भावुक हूं, इसीलिए अपने प्यारे कुत्ते बन्नी की शारीरिक और मानसिक पीड़ा को सहन न कर पायी, अपनी इस दुःखद कथा को आपको भी सुनाने बैठ गयी हूं।

इस वैज्ञानिक युग में जहां प्रगति की होड़ में मनुष्य दूसरे मनुष्य को गिरा दे रहा है, क्यों मैं आपसे आशा कर रही हूं कि आप भी मानवीय पक्ष को आत्मसात् कर प्राणी मात्र के हित की रक्षा करें ? मानव का सदैव सत्य, दया, क्षमा, अहिंसा आदि जैसी उदात्त भावनाओं को अंगीकार करते रहना आज के युग में संभव नहीं है। खैर, मेरी बातें आपको नैतिक मूल्यों को बतलाने के लिए नहीं, कुछ ऐसी बातें हैं जो हर युग में हृदय को कचोटती हैं। मेरी बातें आप सुनना चाहें तो सुनें, यह निर्णय मैं आप पर छोड़ती हूं। लेकिन यह सच

है कि हृदय की इसी कचोट के कारण मैं पागलों की तरह बन्नी को राजधानी दिल्ली के कोलाहल में ढूंढ़ने के लिए बाध्य थी, जब वह लखनऊ से दिल्ली आते समय, गोमती एक्सप्रेस ट्रेन के पार्सल वाले डिब्बे में बंद किये हुए कुत्ते के बक्से (डॉग क्रेच) को खोलते ही बन्नी अपने मालिक की खोज में प्लेटफ़ार्म पारकर पटरियों ही पटरियों लापता हो गये। पोटर (जो पार्सल डिब्बे से चीजें निकलवाता है) क्या करता, बन्नी ने बॉक्स में लगातार बाहर निकलने के प्रयास में अपना पट्टा गरदन से बाहर कर लिया था। उसने जैसे ही दरवाज़ा खोला कि बन्नी हिरन की तरह बाहर कूद आये और किसी के हाथ की पकड़ से बाहर थे।

मेरे स्मृति-पटल पर यह गहन वेदना अवश्य ही आपके लिए मेरी यादों में बसी हुई कोई अंतरतम की गुत्थी होगी, जो मैं आज तक सुलझा न सकी हूं। माना आपका मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण इस उलझी गुत्थी को सुलझा सकने में सक्षम हो, किंतु क्या आप मुझे पहले बन्नी को ढूंढ़कर ला देंगे ? ढूंढ़कर लाना तो बहुत बड़ी बात है, आप तो एक अनुभवी मनोचिकित्सक की तरह मुझे आश्वासन देंगे, "धीरज से काम लो, समय के साथ सब ठीक हो जायेगा। आप मस्तिष्क को अधिक तनावग्रस्त न होने दें, यदि रिलैक्स न हो पा रही हों तो कोई दवा भी लिखकर दे सकता हूं, जिससे आप चिंतामुक्त होकर सो सकती हैं।" लेकिन मेरे लिए प्रिय बन्नी की इस दुखद याद को तूलिका से लिख देने से पहले यह बतलाना अति आवश्यक है कि काफी समय तक तो मैं इस बात को अपने मानस-पटल में याद कर सकने में भी असमर्थ थी। जैसे ही यह सब कुछ मेरी आंखों के सामने गुज़रा, एक अचानक हुई दुर्घटना की तरह वर्तमान के हादसे ने मुझे इतना अधिक संवेगित कर दिया कि मैं स्तब्ध संज्ञाशून्य चेतनावस्था में थी। कितने दिनों तक इस हादसे की कड़ियों को मैं जोड़ न पायी। मेरी यादों में बसा यह दुःखद

दृश्य इतना अधिक गहन और दु:खदायी था कि जीवन की समस्त यथार्थता जानते हुए तटस्थ एक दार्शनिक की तरह बैरागी होने के लिए मेरा मन न माना ।

मेरा मन फड़फड़ाता हुआ गहरे काले बादलों में एक गीले शावक की तरह अपना निविड़ खोजता हुआ इसी हादसे में फंसता जाता, यादों के झंझावात से निकल पाने का कोई मार्ग न मिल पाता, जैसे उसी सघन पीड़ा में पड़े रहने के अतिरिक्त मेरे पास मानो कोई विकल्प न हो। आप चाहें तो मुझे पलायनवादी की संज्ञा दे दें, किंतु आज मैंने आपसे इस याद की चर्चा कर दी तो उस दु:खद यात्रा को, जो मेरे से अधिक पीड़ित होकर मेरे बन्नी ने भोगी थी (मैं तो केवल उस जीव की पीड़ा की कल्पना मात्र से भावनात्मक रूप से बंधी होने के कारण दुखित थी) मैं यथावत् दुहराने की कोशिश अवश्य करूंगी, संभव है इस गहन-वेदना को सुनने के बाद आपका निर्णय बदल जाये। आप मुझे पलायनवादी की संज्ञा न दें। अस्तु सुनिए, और न भूलिए कि हादसों में व्यवहार बड़ी तेज़ी से बदलता है, वस्तु-स्थिति का ज्ञान सब ही सोपानों को जान लेने के बाद संभव हो पाता है। व्यक्तित्व निरूपण करना तो गूढ़ विषय है, एक रूप मेरा वह था कि ठगी-सी बेतहाशा नयी दिल्ली प्लेटफ़ार्म पर खड़ी गोमती ट्रेन की लंबाई को एक छोर से दूसरी छोर तक नापते-नापते पसीने-पसीने हो रही थी। वहां कहीं बन्नी का नामोनिशान न था। कहां गया होगा ? मेरी खोज में कितना परेशान होगा, सुबह से उसने कुछ भी खाया-पीया नहीं है, कुली को क्या जरूरत थी कि मेरे पहुंचे बिना कुत्ते के बक्से को खोल दे ?"

निराशा और खिन्नता से भर जाने का कारण मेरे अंदर इतनी शक्ति नहीं रही थी कि मैं गार्ड साहब के पास जाकर शिकायत करूं। केवल जिस कुली ने कुत्ते का बॉक्स खोला था उसी से पूछताछ करती रही, लगा उसने अपनी भरसक कोशिश कर ली है। उसके अनुसार,

"बहन जी, मैं क्या करता, आज ट्रेन देर से आयी और गार्ड साहब को जल्दी हो रही थी । मैंने जैसे ही कुत्ते का बक्सा थोड़ा-सा खोला कि वह मुंह निकालकर बाहर हो लिया। केवल उसका खुला पड़ा पट्टा मुझे बक्से में मिला । फिर भी मैंने उसे भागते देख पकड़ लेने की पूरी कोशिश की। पटरियों-पटरियों मैंने उसका पीछा किया। मेरे पैर इस धूप में भागने से छिल गये, लेकिन वह कुत्ता हिरन की तरह चौकड़ी मारते हुए आंखों से ओझल हो गया। उसके पीछे जंगली कुत्ते पड़ गये थे। इसीलिए वह जान बचाने के चक्कर में पुल के पीछे जाकर छिप गया है। आप पार्सल ऑफ़िस में चलकर गुमशुदा पार्सल की रिपोर्ट लिखवाकर अपने कुत्ते को ढुंढ़वा लें। शायद थोड़ी देर में प्लेटफ़ार्म पर आपको ढूंढ़ता हुआ वापस आये।"

प्लेटफ़ार्म पर बन्नी का इंतज़ार करने के बाद मैं यंत्रवत् पटरियों-पटरियों चलकर पुल तक बन्नी को ढूंढ़ने आयी और वहां पहुंचकर बन्नी-बन्नी पुकारकर उसे बुलाती रही, लेकिन यहां पर भी मुझे निराशा मिली। कुछ देर बाद लगा पुल के नीचे झोंपड़ी में रहने वाले भिखारी लोग मेरा तमाशा देख रहे हैं और कुछ मेरी दयनीय अवस्था का मज़ाक़ बना रहे हैं । एकाएक मेरे मन में डर व्याप्त होने लगा। कहीं प्लेटफ़ार्म पर से मेरा सामान ग़ायब न हो जाये, सहयात्री कितनी देर तक मेरे सामान की रखवाली करेंगे। कुली भी मेरे इंतज़ार में होगा। अतः अपनी भावनाओं के बवंडर पर पत्थर रखकर मैंने पार्सल ऑफ़िस जाकर गुमशुदा पार्सल की रिपोर्ट दर्ज करा आयी और अपना सामान लेकर स्कूटर द्वारा घर वापिस आ गयी।

उसी दिन ऑफ़िस जाना ज़रूरी था, वहां पहुंचकर मैंने क्या किया, क्यों किया, मेरी चेतना शक्ति समझने और बतलाने की स्थिति में न रही। इतना याद है कि मेरा किसी काम में मन नहीं लग रहा है। रोने का-सा मन होने लगता लेकिन आंसू न आते। उस दिन

खाना-पीना आदि सब बेमन से किया। शाम को घर आकर कुछ मित्रों ने समझाया कि निराश न हो जाऊं। कुत्ते अपने मालिक की खोज में न जाने कितने मीलों भागकर जाते हैं। बन्नी तो बड़ा होशियार कुत्ता है, अवश्य ही घर वापस आ जायेगा। उन लोगों का उस शाम धैर्य बंधा देना हितकर था। मैं दिन भर की भागदौड़ से काफ़ी थक गयी थी। कुछ खा-पीकर तुरंत सो गयी, लेकिन सुबह जैसे ही नींद खुली, मुझे बन्नी की अनुपस्थिति का ज्ञान असहनीय लगने लगा। मैं सुबह उठकर उसको घुमाने ले जाती थी। आज वह मेरे पलंग के पास आकर कू-कू करके उठा नहीं रहा है, न जाने इस समय वह किस हाल में होगा ? इस विचार मात्र से मेरा मन व्याकुल हो उठा। एक अविरल अश्रुधार मेरी समस्त विकलता को धोती हुई बह निकली। कुछ देर रोने के बाद मैं बेचैन हो उठी। लगा इस तरह हाथ पर हाथ रखकर बैठने से अच्छा है कि मैं उसे ढूंढ़ने नयी दिल्ली रेलवे स्टेशन जाऊं। वह बेचारा रेलवे स्टेशन पैदल तो ले जाया नहीं गया था कि अपना रास्ता खोजता हुआ वापस आ जाये। वह तो स्कूटर पर बैठकर स्टेशन गया था। कैसे पैदल चलकर मालिक को खोज लेगा ? उसे नयी दिल्ली से घर की दिशा का ज्ञान कैसे होगा ? पहली बार मैंने महसूस किया कि वैज्ञानिक वाहन के साधनों ने न केवल वातावरण को दूषित करने की समस्या खड़ी की है, पशु-पक्षी भी इसके कारण पंगु बन सकते हैं, स्वच्छंद वातावरण में पक्षी लोग एक दिशा से दूसरी दिशा की हजारों मीलों की दूरी तय करके साइबेरिया से देश-देशांतर अपने बच्चे पैदा करने के लिए आया-जाया करते हैं। इसमें संदेह नहीं यदि बन्नी भी पैदल नयी दिल्ली तक गया होता तो वह अवश्य अपना रास्ता ढूंढ़ लेता।

मेरे स्मृति-पटल पर एक पुरानी याद कौंध उठी जब बन्नी कुछ माह के पपी (शिशु) थे। मेरी छोटी बहन पोस्ट ऑफ़िस गयी थी वह

भी उनके पीछे-पीछे लग लिया था। पोस्ट ऑफ़िस में वह एक केबिन से दूसरे केबिन घूमते-घामते सब कर्मचारियों का मनोरंजन करवाते रहे, बहन टिकट लेने में व्यस्त थी। काम ख़त्म होने के बाद बन्नी पोस्ट ऑफ़िस में नहीं थे। बाहर भी बहुत ढूंढ़ा गया, कहीं दिखे नहीं। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह कैसे आंखों से ओझल होते ही ग़ायब हो गया है? रास्ते भर वह ढूंढ़ती आयी लेकिन निराशा ही हाथ लगी, हताश होकर जब वह घर की ओर आ पहुंची तो उन्होंने देखा कि घर की बालकनी पर अपने नन्हें-नन्हें पंजों को जमाये सिर ऊंचा किये अपनी काली-काली आंखों को पथ पर बिछाये वे आतुरता से उनका इंतज़ार कर रहे थे। उसकी इस शैतानी भरी हरक़त को देख बहन की सारी निराशा बन्नी के बाल-सुलभ खिलवाड़ में बदल गयी। उस दिन के बाद हम सब लोग विश्वस्त थे कि यह कुत्ता कहीं बिछुड़ गया तो अपने घर वापस आ जायेगा। वह अक्सर मुझे बड़ी आसानी से मोहल्ले के एक सामान्य बने सरकारी क्वार्टर में ढूंढ़ लेता क्योंकि कुत्ता अपने मालिक की खुशबू सूंघकर दिशा ज्ञान करता है। बन्नी के लिए तो हिरन की तरह उसका मालिक उसकी कस्तूरी है लेकिन ये सारे विश्वास आज धराशायी हो गये थे। बन्नी को खोये बारह घंटे से ज़्यादा हो गये थे लेकिन वह अपनी कस्तूरी को ढूंढ़ न पाये थे।

चित्त को किसी तरह चैन न मिल पा रहा था। किसी शिशु का सतत रुदन मेरी छाती में धंसा जा रहा था। लग रहा था कि इस वेदना से मेरी छाती फटी जा रही है। यह शूल मेरे लिए असहनीय था, अतः उसके लिए कुछ करने को बाध्य थी। बैठे रहना अब संभव न था। उसी प्रेरणा से प्रेरित हो मैं अपनी एक प्रिय सखी राधा से विचार-विमर्श करने गयी। राधा ने मेरे मनोबल को न केवल बढ़ाया, अपनी निष्ठा से मेरी पीड़ा को एक नयी संवेगात्मक विधा में परिवर्तित कर दिया। बन्नी के खो जाने के उपरांत मेरे मन-प्राण पर एक घनघोर निराशा

एवं विवशता भरी असहायता छा गयी थी, क्योंकि जो भी मुझे मिलता था, यही कहता, "भगवान की इच्छा होगी तो वह कुत्ता तुम्हारे पास स्वयं आ जायेगा, अन्यथा अब उसे भूल जाना हितकर है।" नयी दिल्ली स्टेशन के आसपास कितने सारे खूंखार कुत्ते हैं, बन्नी जैसे कोमल पामेरेरियन कुत्ते को वे कैसे जीने देंगे ? उनसे बच गया तो भी कोई उसे पकड़कर अपने पास रख लेगा । क्या जानें पटरियों-पटरियों भटकता हुआ उसका क्या हाल हुआ होगा ? स्टेशन पर तो रेलगाड़ियों का तांता-सा बंधा रहता है । दौड़ते-दौड़ते कहां गुम हो गया या वह कहीं मरा पड़ा है । ऐसे कठोर अनुमानों को सुनकर मैं स्वयं को जड़-सा अनुभव करने लगी थी, लेकिन राधा से मिलने के बाद लगा चाहे उसे ढूंढ़ते-ढूंढ़ते मुझे उसकी लाश मिले लेकिन जब तक कोई ठोस यथार्थ मेरे हाथ नहीं लगता, तब तक हाथ पर हाथ रखकर घर में भगवान-भरोसे न बैठ सकूंगी ।

अगले दिन नयी प्रेरणा के सहारे मैं अपने निकट संबंधी सुरेन्द्र भाई (जो भाई के साले हैं) के साथ सुबह-सुबह करीब पांच बजे स्टेशन पहुंची । सुरेन्द्र भाई रेलवे के बड़ौदा हाउस में कार्यरत थे अतः रेलवे कर्मचारियों से अच्छी मदद मिलने की आशा थी । लेकिन सुबह-सुबह कौन हमारी मदद करता ? मैंने सुरेन्द्र भाई से आग्रह किया कि वह मेरे साथ-साथ पटरियों पर चलकर बन्नी को ढूंढ़ें शायद पुल के आसपास वह मिल जाये । वह मेरी इस योजना के पक्ष में न थे, लेकिन बहुत अनुनय-विनय के बाद राजी हुए । हम दोनों अनेक रेलगाड़ियों की पटरियों को पार करते हुए स्टेशन से काफ़ी दूर निकल आये । रास्ते भर जो भी लाइनमैन, कुली, पोटर या लाइन के किनारे बसा भिखारी मिलता, मैं उससे पूछती, "क्या आपने किसी सफ़ेद बाल वाले छोटे पालतू कुत्ते को देखा है या कहीं किसी ऐसे कुत्ते की लाश तो पड़ी नहीं देखी ?"

हमारा रास्ता भी काफ़ी बीहड़ था फिर मेरे इस मूर्ख प्रश्न ने सुरेन्द्र भाई को काफ़ी ऊबा-सा दिया। उन्होंने खीजकर कहा, "सुबह-सुबह न राम न श्याम। आप कहां इस नरक में ले आयी हैं। यदि पटरियों पर चलते-चलते आपके चोट आ गयी तो लेने के देने पड़ जायेंगे। यहां से आपको लेकर कैसे जाया जायेगा?"

"चोट मेरे पैर में ही क्यों लगेगी, चोट तो किसी को भी लग सकती है, आपको लगेगी तो मैं क्या करूंगी?"

"मेरी बात छोड़िए, अपनी फ़िक्र करिए। मैं तो एक ज़माने में स्टेशन मास्टर था। हम लोगों का इन पटरियों पर चलने चलाने का अभ्यास है, आपको अंदाज़ा नहीं है कि आप स्टेशन से कितनी दूर निकल आयी हैं, अब तो यहां कोई भिखारी का डेरा भी नज़र नहीं आ रहा है। कितनी दूर इसी तरह और चलने का आपका इरादा है?" सुरेन्द्र भाई ने पूछा।

"भगवान राम भी तो सीता जी की खोज में वन-वन भटकते रहे थे। हर लता वृक्ष से पूछ लेते थे, 'हे खग मृग, हे मधुकर श्रेनी, तुम देखी सीता मृग नैनी'। कहते ही मेरी आंखों में आंसू आ गये। उसे देख सुरेन्द्र भाई द्रवित हो बोले, "यह बात नहीं है तुम जितनी दूर और चाहो इन्हीं पटरियों पर चलो, मैं तुम्हारा साथ निभा दूंगा, चाहे आज हम लोग किसी दूसरे शहर में ही न पहुंच जायें।" उनके इस प्रेम भरे आश्वासन ने मुझे वास्तविकता को पकड़कर योजनावद्ध व्यबहार करने की सुबुद्धि दी। अतः इनसे परामर्श करके मैंने निर्णय लिया कि अब लौटते वक्त जो भी बस्ती आयेगी वहां घुसकर बन्नी की खोज करेंगे।

कुछ दूर चलने के बाद हम पुल पार करके एक घनी बस्ती में पहुंचे, जिसका नाम 'रामनगर' था। हम दोनों कुछ राहगीरों को रोककर पूछताछ करते रहे किंतु किसी प्रकार का सुराग मिलता नज़र

नहीं आया। कुछ लोगों से हमदर्दी अवश्य मिलती लेकिन कुछ लोग ऐसे भी मिले जो मुझे सिरफ़िरा समझ रहे थे। एक ने मेरा मज़ाक़ बनाते हुए कहा, "कहीं खोया कुत्ता इस तरह खोजा जाता है ? कुत्ता तो खुद मालिक की खोज में घर वापस आता है।" उनके अनुसार कुत्ते की खोज में इस तरह से भटकना पागलपन था। लेकिन उस दिन मेरे ऊपर एक जनून-सा सवार था। कोई पागल कहे या जो चाहे सो कहे, मुझे किसी भी तरह की लाज-शर्म बन्नी को खोजने में नहीं आ रही थी। बेहद थककर परेशान होने के बावजूद मेरे मन में कार्यरत रहने की लगन थी।

उसी प्रबल इच्छा शक्ति के सहारे भटकते-भटकते हम दोनों एक सरदार जी के घर आ पहुंचे। वहां एक बीस-बाईस साल के नौजवान सरदार ने बड़ी आवभगत से अपनी चारपाई बिछाकर बातचीत की और बड़े प्रेम से मना करने पर भी एक बड़े कलई के गिलास में ठंडा-ठंडा पानी पिलवाया।

हम दोनों के पानी पीने के बाद उसने पूछा, "आपके सफ़ेद बालों वाले पालतू कुत्ते की कुछ पहचान भी है ?"

उसके सीधे-सादे इस प्रश्न ने मेरा मन उत्साह से भर दिया और मैंने काफ़ी विस्तार से बतलाया कि उस कुत्ते के माथे पर रोली का एक लंबा टीका लगा हुआ था जो कि बन्नी के माथे पर मेरी भानजी मीनू ने लगाया था। भाई दूज करके हम लोग लखनऊ से रवाना हुए थे। मीनू बन्नी को भाई मान रक्षाबंधन और भाई दूज पर राखी टीका करती आयी है। अतः मुझे विश्वास था यह पहचान आज बन्नी की आड़े हाथ आयेगी। बहन शुभकामनाओं सहित भाई के टीका लगाती है और बन्नी जैसा भाई उस टीका राखी को सदैव बड़े चाव से करवाता था।

सरदार जी खुशी से उछलकर बोले, "बहन जी, आप चिंता न

करें। आपकी रोली लगाये हुए एक सफ़ेद पालतू कुत्ता परसों मेरे घर बैठा मेरी कुतिया के साथ खेलता रहा है। मेरे पास भी आपकी दया से अच्छी जाति वाली सफ़ेद रंग की कुतिया है। मुझे उन दोनों की जोड़ी बहुत अच्छी लगी थी लेकिन उस दिन हम सब लोग बच्चा होने की खुशी में थे। मेरी भावज के पांच लड़कियों के बाद उस दिन पहला पुत्र पैदा हुआ था। उसी भागदौड़ में हमने आपके कुत्ते को बांधकर नहीं रखा। अगर मालूम होता कि वह आपका है तो हम जरूर बांधकर रखते।" कहकर वे चुप हो गये जैसे मन-ही-मन खेद कर रहे हों।

उनकी सरलता ने मुझे आत्मविभोर कर दिया। इसके अतिरिक्त कहीं से तो कोई आज बन्नी का सुराग मिला था। सरदार जी का उत्साह बढ़ाने के लिए मैंने कहा, "यदि वह भटकता हुआ आपके घर दुबारा आये तो आप उसे ज़रूर बांधकर अपने यहां रख लें और कृपा करके हमें सूचित करें। हो सकता है वह इसी मोहल्ले में हो क्योंकि उसका स्वभाव बच्चों के साथ खेलने का है। जानवरों से ज़्यादा उसे मनुष्य अच्छे लगते हैं। आपकी भतीजियों के साथ तो वह बेहद मग्न रहेगा।"

"यह बात आपने दूसरी कही जिससे पता चलता है कि आपका ही कुत्ता हमारे यहां आया था। वह मेरी छोटी भतीजी रीना के साथ खेल रहा था। रीना उसके कान पकड़ती, मारती, मुंह में हाथ डालती, लेकिन कुत्ते ने कुछ खाया-पीया नहीं था।"

"वह कैसे खाता-पीता। आपके यहां तो वह रेलवे स्टेशन से भटकता हुआ आ पहुंचा था, यहां आकर उसे..." कहते हुए मैं फूट-फूटकर रोयी क्योंकि बन्नी को इस भटकाव में कितनी अधिक पीड़ा हुई होगी इसका ज्ञान मुझे असहनीय था।

"अरे, आप तो रोने लगीं। अब रोने की क्या बात है ? इस

मोहल्ले के सब लोग मुझे अच्छी तरह जानते हैं। जिस किसी के पास भी यह कुत्ता होगा मैं पता करके आपको टेलीफ़ोन कर दूंगा। आप आकर उसे ले जाना।" सरदार जी के इस भोले आश्वासन ने मेरी समस्त शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा शांत की। मुझे लगा इस रामनगर में बन्नी की भेंट इस सरदार से वैसी ही हुई है जैसे एकाएक लंका में हनुमान जी की भेंट विभीषण से हो गयी थी। यहां आकर बन्नी अवश्य ही कुछ देर विश्राम कर सका होगा। पता नहीं इस रामनगर में वह अब होगा या नहीं ? वह कहां होगा, किस हाल में होगा उसका अता-पता मालूम करने के लिए मैंने सरदार जी से आग्रह किया कि वह हम लोगों के साथ चलकर अपने मोहल्ले में पूछताछ करें। किंतु सरदार जी अपने वायदे पर रहे। उनका कहना था कि मैं पूरा यक़ीन रखूं कि वह इस बात की जांच-पड़ताल अपने हिसाब से करेंगे और उसके मुताबिक टेलीफ़ोन करके जल्दी ही जवाब देंगे। इस तरह घर-घर जाकर बात करने से बात बिगड़ जायेगी क्योंकि राम नगर में छोटी जाति वाले लोग बसते हैं। उनका दिमाग़ बड़ी जल्दी ऊपर हो जाता है।

सरदार जी के आग्रह पर हम लोग उनके परिवार के अन्य सदस्यों से मिले। नवजात शिशु को भी अंदर जाकर देखा और आशीर्वाद सहित कुछ रुपये दिये। मेरा मन उस नवजात शिशु के लिए एक अनोखे वात्सल्य से भर गया था। न बन्नी खोते, न बन्नी की खोज में भटकते मुझे इस भाग्यशाली बच्चे के दर्शन होते, वह अपने परिवार में ही हर्षोल्लास को लेकर नहीं आया है, मेरे लिए भी वह भगवान स्वरूप था। शिशु तो सदैव भगवान का स्वरूप माना गया है। चाहे वह सिख का हो, या ईसाई का, मुसलमान का या हिंदू का। अतः इस शिशु दर्शन ने मुझे आज धन्य कर दिया।

विदा लेकर हम लोग चौराहे तक ही पहुंचे होंगे कि सुरेन्द्र भाई

ने मुझे सचेत किया, "इस तरह की बस्ती में रुपये लुटाकर आप बन्नी को नहीं खोज सकतीं। वह कुत्ता न जाने कितने घरों में भटकता रहा होगा, आप किस-किस के घर घुसकर उसे ढूंढ़ती फिरेंगी ?" उनकी तर्क भरी बातों का मेरे पास कोई उत्तर न था। मेरे लिए इससे बड़ा आज कोई शुभ समाचार न था कि बन्नी भटकता हुआ इस घर में आया था और मुझे ऐसे नवजात शिशु के दर्शन का सौभाग्य मिला, जिसके जन्म दिवस पर परिवार में हर्षोल्लास का पारावार न था। इस सिख परिवार ने मेरे व्याकुल भटके बन्नी को न केवल आश्रय दिया, मुझ जैसी उसके विछोह में व्याकुल को धीरज बंधाया और पुनः मिलन करवाने का पूरा आश्वासन दिया है। ऐसी खुशी के मौक़े पर रुपयों की न्यौछावर दिल खोलकर होनी ही चाहिए। लेकिन यथार्थता की धरातल कठोर होती है वहां पर कोमल भावनाएं ठहर नहीं पाती हैं। अतः मौन धारण कर लेना ही मेरे लिए श्रेयस्कर था। जैसे बलात्कार हुई नारी मौन होकर उस क्रूर पुरुष के अत्याचार को सहती है। आप कहेंगे ऐसे घृणित अमानवीय व्यवहार ही कल्पना करवाकर आप यथार्थता से पलायन करने की कोशिश करना भी चाहें तो पाठकगण साथ न देंगे। कृपया उत्तेजित न हों यदि आपको अभी तक रुचि आ रही हो तो अपनी जिज्ञासा को 'बलात्कार' जैसे शब्द से संवेगित हो दबा न लें। इस संसार में सब होता है। समुद्र-मंथन में विष अवश्य निकलता है, जो विष-पान कर सकता है वही समुद्र-मंथन करने का बीड़ा उठाता है, अस्तु।

सुरेन्द्र भाई ने चौराहे पर आकर सरदार जी के बारे में पूछताछ की और ऐसे एक कटु सत्य को उजागर किया जिसे स्वीकार करने के लिए मैं बाध्य थी। चौराहे पर एक चाय की दुकान पर कुछ लोग बैठे चाय पी रहे थे, वहां बैठकर चाय पीते समय रामनगर की निम्नवर्गीय सभ्यता का अच्छा-खासा ब्यौरा मिला और साथ-

ही-साथ यह भी पता चला कि सरदार का नाम, जो उसने हमें बतलाया था, वह सही नहीं है। वह उस मुहल्ले का नामी दादा है। पुलिस उसकी तलाश में अक्सर घर पर छापा मारती है। सरदार कई भाई हैं, अन्य भाई अच्छे धंधे में हैं और नेक चाल-चलन के हैं। बड़ा भाई तो ‥वता है, उसी के पांच लड़कियों के बाद परसों एक लड़का हुआ है। उसका कार-मरम्मत करने का कारखाना है। सारे भाई सबसे छोटे भाई के कारनामों से परेशान होकर मां से लड़ते-झगड़ते रहते हैं और छोटा सरदार मां के साथ अलग रहता है। इन्हीं झगड़ों के कारण सबके चूल्हे अलग हो गये हैं, लेकिन मकान बाप का होने के कारण मां का साथ सब निभाते हैं और इस निकम्मे लड़के को भी खिलाते हैं।

हम लोगों को सरदार ने अपना नाम बलविन्दर बतलाया था। अत: उसके बारे में सुने कटु सत्य को स्वीकार करने को बाध्य थी। लेकिन मुझे उसमें वाक्पटुता और वांचालता के अतिरिक्त कोई अन्य दोष को गले से उतारना कठिन लग रहा था। मन-ही-मन मैंने निश्चय किया कि चुप रहकर सब कुछ सुना और देखा जाये और उसे तटस्थता से स्वीकार किया जाये। चाय की दुकान पर भीड़ बढ़ने लगी थी। चाय वाले ने हमें धीरज से बैठने को कहा, "साहब, यह टाइम धंधे का है। आप लोग बैठें, कुछ देर बाद मैं आपको बहुत कुछ बतला दूंगा, क्योंकि मेरी दुकान पर भी एक कुत्ता सफ़ेद रंग का आया था, जिसे देखकर ही लगा था कि वह पालतू है, सिर झुकाये वह हरेक से प्यार करवा लेता था लेकिन खाता-पीता कुछ न था।"

सुरेन्द्र भाई को चाय वाले से बातचीत करने में विशेष रुचि न आ रही थी, लेकिन बन्नी के बारे में चाय वाले को जानकारी है, इसलिए मुझे भी बैठना पड़ा। चौराहे के बीच पड़ी बेंच पर बैठकर चाय पीने का मेरा यह अनोखा अनुभव था। कोई अनुमान नहीं कर

सकता कि मैं भी ऐसी दुकान के सामने बैठकर चाय की चुस्की लेते हुए बतिया सकती हूं ।

धंधा समेटकर चायवाले ने पूछा, "क्या उस कुत्ते के माथे पर रोली का टीका लगा हुआ था ?" उत्तर की प्रतीक्षा न किये हुए उसने कहा, "अच्छा होता आपकी भेंट सबसे बड़े सरदार जी से हुई होती । वह ही उस घर का ज़िम्मेदार आदमी है। छोटा सरदार तो महागप्पी, लंपट है। मसाला तो मेरे पास बहुत कुछ है लेकिन डरता हूं, साहब ! उसे पता चल गया तो वह मुझे कहीं का नहीं छोड़ेगा। उससे हम सब लोग बेहद डरते हैं। उसका बड़े-बड़े लोगों से मिलना-जुलना भी है। बड़ी-बड़ी डींगें मारता रहता है, लेकिन धंधा कुछ भी नहीं करता। बड़े भाई की रोटी पर पलता है। हो भी सकता है कि कुत्ते को देखकर आपको इत्तला दे, आप लोगों की पहचान बड़े लोगों तक होनी चाहिए। ग़रीब का तो बच्चा खोने के बाद साहब कहा मिलता है, मां रो-धोकर गम पी लेती है, लेकिन अमीर आदमी का कुत्ता भी जब खोता है तो कुछ और ही बात होती है।" चायवाले के इस कथन को कौन असिद्ध कर सकता था ? लेकिन कुत्ता ढूंढ़ने के लिए ग़रीब और अमीर का क्या सवाल, ऐसे कौन दर-दर भटकता है ? चायवाले को कौन समझाता ।

मुझे बन्नी को ढूंढ़ने के प्रयास में कई बार जाने का और रामनगर के कई निवासियों से मिलने-जुलने का सौभाग्य मिला, लेकिन बन्नी को मिलवाने का जो विश्वास बलविन्दर दिलवाता वह अन्य कोई न दिला पाता। इसमें संदेह नहीं कि मोहल्ले के लोगों में बलविन्दर के बारे में जो राय थी वह मेरे विश्वास को झकझोर कर रख देती । उनके अनुसार वह सिख नौजवान चलता-पुर्जा, लंपट, दूसरों की आंख में धूल झोंकने वाला, चालबाज, आवारा क़िस्म का युवक था जो अपने भाइयों की तरह मेहनत करके खाना नहीं पसंद

अपना आत्मविश्वास खो देते हैं। मुझे लगा कि सरदार बलविन्दर का किशोर मन इन्हीं कुंठाओं से ग्रसित हो गया है। समय के साथ वह गबरू जवान तो हो गया है लेकिन उसमें व्यक्तित्व के विकास की कमी है, जिससे सभ्य समाज में स्थापित होने के लिए, अच्छा नागरिक बनने के लिए उसे जीवन भर असामाजिक और अनैतिक रहना पड़ेगा। किंतु वह किन्हीं बातों में उन शिक्षित, उच्च-पदासीन, विकृत मन के लोगों से ऊंचा है जो अपने अविकसित, अनैतिक व्यक्तित्व द्वारा समस्त मान्यताओं को धराशायी करते रहते हैं। वे पढ़े-लिखे होने के कारण समाज को जितना अधिक ठगते रहते हैं, उतना बेचारा कोमल भावनाओं की परख रखने वाला यह अनपढ़ बेकार बलविन्दर कैसे कर सकता है ? चतुर बुद्धि वाले 'साइकोपैथ' में मानवीय उद्‌गारों का अभाव रहता है। दूसरों का शोषण करते हुए उनमें ग्लानि, क्षोभ, पश्चात्ताप आदि की कोमल भावनाएं उठतीं नहीं। लेकिन बलविन्दर में मुझे मानवीय कोमल भावनाओं की परख पैनी लगी। समाज से भटके प्रतिशोध, हिंसा आदि लेने के मार्ग में अग्रसर पथभ्रष्ट नवयुवकों को 'साइकोपैथ' क्यों कहा जाये जबकि उनका ग़लत समाजीकरण परिवार में कलह, क्लेश और सामाजिक विसंगतियों के कारण हुआ है।

कारण कुछ भी हो, वर्तमान में जो लक्षित होता है मनुष्य धारणा उसी के अनुसार बनाकर चलता है। महानगरी में कितने ऐसे युवक हैं जो बेकारी की स्थिति में नया स्वाद चखने की लालसा में गंदी गलियों में भटककर रह जाते हैं। इन्हीं गंदी गलियों में भटककर न जाने बन्नी साहब का क्या हाल होगा ?

बन्नी ने अत्यंत सुखद वातावरण में अनुशासित जीवन जिया है। सुबह ठंडा-ठंडा दिया हुआ दूध यदि वह एक सांस में न पी लेता तो दिन भर दूध पड़ा रहता, वह उस ओर सूंघता तक नहीं। चाहे उसे कुछ खाने को मिले या नहीं, इसकी मानो कोई परवाह न थी। लेकिन

वही बन्नी भूख-प्यास से बेहाल हुआ अब इतने नखरे कर रहा होगा ? कठिन परिवेश में मनुष्य, पशु, पक्षी सब आकर घुटने टेक देते हैं। मेरे लिए भी सुबह रोज़-रोज़ रामनगर जाकर बन्नी को ढूंढ़ना संभव न हो सका। कुछ ऐसे जरूरी काम आ पड़े जिनके कारण चाह कर भी मैं इतनी दूर जाने में असमर्थ थी। मैंने उन सब कामों को जल्दी पूरा करने की अपनी भरसक चेष्टा की। घर बदलने के कारण तमाम काम आ पड़ा था। ऊपर से कई विशिष्ट अतिथि मेरे यहां आने वाले थे, जिनका उचित सत्कार करने के चक्कर में चाहकर भी बन्नी की खोज-खबर न ले सकी।

एक दिन मेरा मन बेहद उचाट था। मेहमानों ने मेरी बेचैनी का कारण पूछा, लेकिन वह किस तरह इस समस्या का समाधान कर पाते। शाम को उन्हें अपने कुलगुरु श्री शांतानंद जी (जो अपनी शंकराचार्य की गद्दी को हाल में छोड़ चुके थे भाग्यवश मेरे पड़ोस में पधारे हुए थे) के दर्शन कराने ले गयी। गुरु जी को सादर प्रणाम करके मैं चुपचाप एक कोने में बैठ गयी। गुरु जी को अपने अंतरतम की वेदना कहने की मैंने आवश्यकता न समझी। गुरु तो त्रिकालदर्शी होते हैं फिर ये गुरु तो बड़े सिद्ध महात्मा सर्वविख्यात थे।

कहते हैं 'विश्वासं फलदायकम्' गुरु जी ने मेरी ओर संकेत करके पूछा, "क्यों इतनी परेशान चुपचाप बैठी हैं। सब कुशल से तो हैं ?"

मेरे अतिथि ने बतलाया, "गुरु जी सब कुछ आपकी दया से कुशलपूर्वक हैं, लेकिन इनका पालतू कुत्ता लखनऊ से आते समय रेलवे कर्मचारियों की लापरवाही के कारण बिछुड़ गया है। बहुत खोज-खबर के बाद पता चला कि वह रामनगर की बस्ती में छिपा हुआ है, इसीलिए यह बेहद परेशान और चिंतित रहने लगी हैं, काफ़ी दौड़-धूप भी की हैं।"

गुरु जी ने प्रेम सहित बैठाकर समझाया, "लगता है बेटी तुम्हें उस कुत्ते से मोह हो गया है, मोहजाल में फंसकर प्राणी केवल दुःख ही पाता है ।"

"हां गुरुदेव, मुझे लगता है वह कुत्ता रो-रोकर मुझे बुला रहा है। कुछ भी खा-पी नहीं रहा है। मेरा मन भी छटपटाता रहता है, जैसे कोई शिशु अपनी मां के लिए बिलख रहा हो ।"

मेरी बात सुनकर गुरु जी मौन हो गये। मैं उनके उत्तर की बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा करती रही। कुछ देर बाद मौन को भंग कर वह प्रेमपूर्वक बोले, "रामनगर में वापस जाओ, वहां तुम्हें वह मिल जायेगा, लेकिन मोह का बंधन काटो।" गुरु की दृष्टि में अगाध प्रेम भाव था, मेरे लिए ही नहीं, समस्त दीनहीन जीव समाज के लिए, उनका प्रेमभाव सागर की तरह मचलता हुआ झलक रहा था। अतः ऐसे गुरु के दर्शन कर, विशेष तौर से उनका उपदेश ध्यान में रखकर मैंने अपने चित्त को अधिक विचलित न होने दिया ।

शाम के समय दिन भर काम करने के बाद जब घर वापस आती तो बन्नी मेरा स्वागत बड़े प्रेम से करते थे। उसके साथ कुछ देर सुस्ता कर, कुछ खा-पी लेने के बाद बाहर घूमने जाने का मेरा नित्य का प्रोग्राम रहता था। अतः मोह काटने के प्रयत्न में मैं शाम को तुलसी जी के पास एक दीया जलाकर बन्नी के कुशल-क्षेम से रहने की प्रार्थना करने लगी। मन-ही-मन यही मानती कि वह घर वापस आकर इस तुलसी के पौधे के पास बैठे क्योंकि बन्नी को उसके पास बैठना विशेष पसंद था, मेरी मां उस पौधे की सुबह-शाम पूजा जो किया करती थी। एक दिन मेरी प्रार्थना स्वीकारी गयी, बलविन्दर का रामनगर से टेलीफोन आया, "बहन जी, आप इसी वक्त यहां आ जाइए। मैंने आपके कुत्ते को एक महिला के पास देखा है। वह कहती है यह उसकी कुतिया है, लेकिन मुझे लगता है वह आपका ही कुत्ता है।"

इस संवाद ने मेरे अंदर जाने कितनी स्फूर्ति पैदा कर दी। मैं तुरंत अपने मित्र के नौकर गौरी को लेकर रामनगर जा पहुंची। बलविन्दर ने सहर्ष मदद दी, लेकिन जब तक हम लोग उस महिला के घर पहुंचे, वह अपने घर पर ताला लगाकर कहीं चली गयी थी। बलविन्दर को उस महिला पर बहुत क्रोध आया। उसने तुरंत पुलिस की मदद लेने की सलाह दी। बन्नी रेलवे की गुमशुदा पार्सल का हिस्सा थे, अतः उसकी तलाशी के लिए पुलिस ने पूरा-पूरा सहयोग दिया। थाने से एक पुलिस कांस्टेबल को लेकर हम लोग उस महिला के घर पहुंचे, ताला अभी भी लगा था। उस महिला का अता-पता नही चल रहा था। पुलिस का भय सत्य को कितनी जल्दी उगलवा सकता है। माना बलविन्दर से उस मोहल्ले में सब डरते थे, उसे दादा कहते थे, लेकिन वह औरत उसे झांसा देकर छिपकर बैठ गयी थी। पुलिस की यह धमकी कि वह रेलवे की चोरी के बारे में यहां के कई लोगों को थाने ले जाकर पूछताछ करेगी तब आस-पड़ोस के लोग इकट्ठा होने लगे और आपस में कानाफूंसी करने लगे और थोड़ी ही देर में एक औरत ने बलविन्दर को इशारे से अपने नज़दीक बुलाकर बतलाया, "वह कुछ देर पहले एक सफ़ेद कुत्ते को लेकर पीछे के किवाड़ से निकली है और गली के नुक्कड़ वाले नंबर चार के घर में बैठी है। उसको शायद आपके आने की भनक मिल गयी थी। उसका पति घर पर नहीं है। बेचारी डर के मारे छिपकर बैठ गयी है। उसका कोई कसूर नहीं है। उसी ने मुझे अपने दरवाज़े पर ताला लगाने के लिए कहा था। मैं चाबी देकर आ रही हूं। आपके जाते ही वह वहीं बैठी मिलेगी।"

क्या कोई खुफ़िया पुलिस भी इतनी जल्दी और इतनी आसानी से इस रहस्य को खोल पाती ? जितनी सावधानी से बलविन्दर उस महिला को गली के नुक्कड़ वाले घर से निकाल लाया। वह महिला

सिर नीचा किये हुई थी, उसके हाथ में चेन से बंधा सफ़ेद रंग का बड़े बालों वाला पालतू कुत्ता था, जिसे पास आता देख मैंने पहचान लिया कि वह बन्नी ही है। महिला के हाथ में चेन से बंधा होने पर भी वह मुझे और भीड़ को देखकर भौंकने लगा था। उसके माथे पर एक लाल सिंदूर का बड़ा-सा टीका लगा था और पैरों में घुंघरू बंधे हुए थे। महिला और पुलिस दोनों में बातचीत होने से पहले ही इकट्ठा भीड़ में आवाज़ें आने लगीं, "औरत के हाथ में तो कोई चीज़ नहीं दिखलाई दे रही है। क्या अब पुलिस इसके घर की तलाशी लेगी ? पुलिस यहां डराने-धमकाने क्यों आयी है ? इस बेचारी ग़रीब को रेलवे से क्या लेना-देना। जाकर इसके आदमी को बुलाकर लाओ, देखते हैं पुलिस इसके घर की कैसे तलाशी लेती है आदि।" शायद बलविन्दर के साथ में होने और मुझे और गौरी को साथ देखकर भीड़ में से कोई सामने आकर पूछताछ नहीं कर रहा था। महिला ने हाथ जोड़कर पुलिस को अपनी सफ़ाई दी, "साहब, मुझे पता नहीं था कि आप मेरी तलाश में आये हुए हैं। मैं थोड़ी देर पहले पड़ोस में कुछ काम के लिए ताला लगा कर चली गयी थी। मेरा मर्द घर पर नहीं है। मैं यह सुनते ही कि आप मेरी तलाश में हैं, चली आ रही हूं।" पुलिस ने उसकी बात को सुनकर धमकी देते हुए कहा, "यह कुत्ता कहां से लायी हो ?"

"सरकार, यह मेरी कुतिया है, मेरे सिवा किसी के पास नहीं आती-जाती। इसी को तो घुमाने मैं गयी हुई थी।"

"अच्छा, अभी पता चल जाता है कि यह कुतिया है या कुत्ता, इसकी चेन खोल दो।" कड़ककर पुलिस कर्मचारी ने आदेश दिया। पीछे से कई आवाज़ें आयीं, "कुत्ता अपने मालिक को क्यों नहीं पहचानेगा ?"

महिला ने जैसे ही चेन खोली, बन्नी साहब हिरन जैसी छलांग मारकर मेरे पास आ गये और एक छोटे पप्प (शिशु) की तरह

विह्वल होकर मुझे खुशी से चूमने लगे। भीड़ में कई स्वर एक साथ बोले, "अरे इन मेम साहब का कुत्ता इसने छिपा लिया था। कुत्ता अपने मालिक को कैसे नहीं पहचानता, कैसा परेशान कर दिया इस औरत ने सब लोगों को।" इसके बाद भीड़ मुझे और उस महिला के बारे में जानने के लिए अधिक उत्साहित हो इकट्ठी होने लगी। ऐसी परिस्थिति में हम लोग उस महिला को लेकर बलविन्दर के घर आ गये। बातचीत से पता चला कि उस महिला के घर बन्नी घूमते हुए पहुंच गया था और उसने उसे बड़े चाव से कुतिया बनाकर रख लिया था। वह उसे घुमाने-फिराने चेन करके ले जाती और अपने पास ही सुलाती थी। उसने बलविन्दर के कहने पर बन्नी को दिखलाना पसंद नहीं किया था, क्योंकि उसे भय था कि कहीं उसकी प्यारी कुतिया को कोई आकर न ले जाये। इतने दिनों तक कलेजे से लगाकर रखने के कारण उसे मोह हो गया था। ये बातें सुनकर मेरा मन एकाएक वैरागी हो गया। अतः मुझे कहने में संकोच न हुआ, "अरी बहन, इस कुत्ते ने हम सबको खूब रुलाया है। यदि तुम इसे इतना अधिक प्यार करने लगी हो, तो रख लो अपने पास। मुझे तो इसे ज़िंदा या मुर्दा खोजकर निकालना था और सो अब इन बलविन्दर साहब और पुलिस की सहायता से पता लगा लिया।" कहकर मैंने बन्नी को उस महिला की ओर सरकने के लिए बढ़ाया। लेकिन बन्नी साहब गुर्राने लगे। अब तो वह उस महिला के पास जाने को क्या, उसे अपने को छूने भी नहीं देने को तैयार थे। उस महिला की इतनी दयनीय अवस्था देखकर मैंने बन्नी को लेकर तुरंत रेलवे स्टेशन की ओर जाना उचित समझा। बलविन्दर और पुलिस दोनों उसे डराने-धमकाने लगे थे। हो सकता है उनका उद्देश्य कुछ पैसे वसूल करना रहा हो, लेकिन मैंने बीच में पड़कर उन लोगों को समझाया कि इस तरह का कोई समझौता न करें। भविष्य में यदि मेरी सहायता की ज़रूरत पड़े तो अवश्य संपर्क

स्थापित करें।

महिला से विदा मांगते समय मेरा रोम-रोम उसके किये हुए उपकार के लिए कृतज्ञ था, केवल बन्नी उससे काफ़ी नाराज़ लगता था। वह गौरी के साथ-साथ रहने में अधिक सुरक्षित महसूस कर रहे थे। पुलिस कर्मचारी भी हैरान था कि इस मूक पशु के कारण इन दो महिलाओं में इतना अधिक अपनापन हो गया है लेकिन यह कुत्ता उस महिला को अब छूने भी नहीं देता।

रेलवे स्टेशन तक बन्नी को लेकर पैदल ही आना पड़ा क्योंकि मुझे थाने जाकर धन्यवाद देना था और रेलवे के पार्सल ऑफ़िस जाकर गुमशुदा बिल्टी मिल जाने की रिपोर्ट लिखवाकर उसे विधिवत् छुड़वाना था। इस काम में काफ़ी समय लगा। बन्नी गौरी के साथ सावधानी से चुपचाप खड़े रहे, जैसे हर चीज़ को तैनाती से करवाना उनका कर्तव्य था। स्कूटर द्वारा घर तक की यात्रा में बन्नी मेरी गोद में बैठे रहे। उनके सफ़ेद रेशमी बाल हवा में उड़ रहे थे मानों वह चादर से मेरे मन-प्राण पर छायी उदासी को क्लांतहीन कर रहे हों। इस बार बन्नी को इस रेल-यात्रा ने कुछ सिखलाया हो या नहीं, मुझे अवश्य जो ज्ञान दिया था वह पुस्तकों से आना संभव नहीं है।

कहते हैं गुस्से में मनुष्य पशुवत् हो जाता है, लेकिन कब पशु मानववत् हो जाता है इस बात की चर्चा क्यों नहीं ? यह बात मैंने इसलिए आपसे पूछी, क्योंकि बन्नी के खोने के बाद मैंने अपना क्वार्टर बदला था इसलिए बन्नी को नये मकान में ले जाने से पहले मैंने उसे अपने पुराने क्वार्टर में ले जाकर दिखाना-सुंघाना उचित समझा जिससे कि वह कनफ्यूज़ (भूलकर व्याकुल होना) न हो जाये। मुझे पता था कि कुत्ते-बिल्ली अपने घर की चारदीवारी से बेहद जुड़े होते हैं। मेरे लिए नया क्वार्टर मेरी पदोन्नति और प्रतिष्ठा का द्योतक था लेकिन बन्नी के लिए नया मकान और पड़ोस दोनों ही दिशा

भ्रम-जाल फैलाने वाले। अस्तु, स्कूटर से उतरकर मैं बन्नी को लेकर पहले पुराने घर गयी। फिर वहां सुंघाकर पैदल नये क्वार्टर लायी लेकिन बन्नी ने नये घर को ही घर समझा।

दूसरे ही दिन बन्नी का आगमन विद्युत तरंगों की तरह फैलने लगा, जो सुनता आश्चर्यचकित हो जाता। नयी पड़ोस होने के कारण सब लोग स्तब्ध भाव से एक सतत् संवाद का हिस्सा बने हुए थे, मुझसे आकर केवल बहुत ही घनिष्ठ लोगों ने पूछा लेकिन आपस में वह कुछ कह रहे थे, पूछ रहे थे, सुन रहे थे या बन्नी को दुलार कर कहते, 'लकी डॉग (क़िस्मत वाला कुत्ता)। हमारे नये पड़ोस में बन्नी का स्वागत सबसे आगे बढ़कर बच्चों ने किया और उसे पूरा अहसास दिलाया कि वह भी बन्नी की खोज करने में व्यस्त रहते थे। प्रिया ने ढेर सारी पेंटिंग का अंबार लाकर बन्नी के सामने रखा, जो उसने बन्नी की याद में बनायी थी। पहले प्रिया ने इस बात की चर्चा बच्चों में नहीं की थी। अतः अनु ने तुनककर कहा, "आंटी, प्रिया बातें खूब बनाती है, तूने कब बनायी थी ?"

"मैं स्कूल बस से आते हुए रोज़ बन्नी को ढूंढ़ती रहती थी और पेपर में उसकी तस्वीरें बनाती रहती थी।" प्रिया ने कहा।

"ये भी कोई बात हुई, ये तस्वीर किसी भी कुत्ते की हो सकती है, तूने बन्नी को कब देखा था ? आंटी तो पड़ोस में थोड़े दिनों पहले आयी हैं, उनका कुत्ता बन्नी कब का खो गया था।" अनु को प्रिया का बन्नी पर यह विशेष अधिकार न भाया।

"परंतु अनु, ये सारी पेंटिंग प्रिया ने बन्नी की याद में बनायी हैं, इसलिए यह बन्नी ही है, ऐसा मानकर चलो..." मैंने दोनों की बात रखनी चाही। बन्नी अपना नाम सुनते चौकन्ने होकर बैठ गये थे और एकाएक कूदकर पेंटिंग की ढेर पर आ बैठे। अनु ने प्रिया को चिढ़ाते हुए कहा, "चुप कर, यू नॉटी गर्ल (शैतान लड़की), आंटी को तू कब से

जानती है ?"

"देखो बन्नी ने सिद्ध कर दिया कि ये उसकी पेंटिंग है, अनु अब तुम सिद्ध करो कि यह कुत्ता बन्नी नहीं है।" मैंने पेंटिंग के अंबार से बन्नी को उठाते हुए कहा।

"मैं बन्नी और आंटी दोनों को पहले से जानती हूं, तू नहीं जानती । पहले हम लोग भी वहीं रहते थे जहां से आंटी आयी हैं। तू ही अमेरिका से कुछ दिनों पहले आयी है।"

अनु का चेहरा गुस्से से लाल हो गया। अपने को संयत करते हुए कहा, "यह बन्नी ही है, मैं सिद्ध कर सकती हूं। मुझे थोड़े से बिस्कुट दीजिए, मुझे पता है कि बन्नी कभी भी चौके के भीतर नहीं घुसता यदि यह दूसरा कुत्ता हुआ तो मेरे पीछे-पीछे चौके में बिस्कुट लेने पहुंचेगा।"

अनु ने अपनी बुद्धिमत्ता से यह सिद्ध कर दिया कि यह कुत्ता बन्नी ही है फिर बच्चों ने बड़ी जिज्ञासा से पूछा कि किस तरह रामनगर में वह पहचाना गया। मैंने विस्तार से बच्चों को बतलाया कि एक औरत ने बन्नी को सिंदूरी टीका लगा, पैरों में घुंघरू पहनाकर किस तरह अपनी कुतिया बनाकर रखा हुआ था। वह किसी भी हालत में बन्नी को अपने से अलग नहीं करना चाहती थी लेकिन मुझको देखते ही बन्नी ने उस औरत को फिर छूने भी नहीं दिया। बन्नी का नाम बार-बार वार्तालाप में आ रहा था। शायद वह इस नाम को सुनने के लिए तरस गये थे। रामनगर में किसे पता था कि उनका क्या नाम है ? मारे खुशी के वह फूले नहीं समा रहे थे और बच्चों से मेरा ध्यान हटाने के लिए अपना सिर मेरी गोद में रख देते थे या बच्चों के साथ बाहर चलने की जिद करते।

बन्नी का नये घर में एकच्छत्र अधिकार हो गया। घूमते वक़्त मैं उन्हें कभी-कभी अपने पुराने घर की दिशा में ले जाती लेकिन वह

पुराने घर को सूंघकर वापस लौट आते। मानो उस परिवेश से उन्हें क्या लेना-देना? नया घर काफ़ी बड़ा और खुला हुआ था। घंटी बजने पर एक कमरे से दूसरे कमरे की दूरी पार करते-करते मैं थक-सी जाती थी, लेकिन बन्नी साहब बड़े चाव से घंटी बजते ही दरवाज़े पर पहुंच जाते और मुझे लिवाने के लिए क़ई बार उसी दूरी के चक्कर लगाते। दरवाजा खुलते ही वह उन लोगों को अंदर नहीं आने देता जिनसे उन्हें बचपन से चिढ़ थी, जैसे—गैस सिलेंडर वाला, नमकीन बेचने वाला एक गुजराती जो बहरा होने के कारण ज़ोर से बोलता था या किसी निम्न वर्ग वाला व्यक्ति। मुझे आश्चर्य होता था कि यह कुत्ता इतने दिनों तक रामनगर में निम्नवर्गीय परिवेश में भटकने और आश्रय पाने के बावजूद इतना स्नौब्रिश (अपने जीवन स्तर से ऊंचे रहने का अभिमान प्रदर्शन करने वाला) क्यों है? मानों उनकी रुचियों या अरुचियों पर इतने बड़े हादसे का कोई असर न था, उनकी आदतें पूर्ववत् थीं। पहले की तरह वह घर में नित्य काम करने वाले लोगों से प्यार करता था। मेरे क्वार्टर से मिला-जुला नौकर का कमरा था। वह उसके घर आने की प्रतीक्षा आतुरता से करता और बच्चों के साथ खेलता-कूदता जैसे वह उसके प्रिय मित्र हों। पिंकी, मीनू और उनका छोटा भाई बन्नी को अपने क्वार्टर ले जाना चाहते तो वह पसंद न करता। नौकर के क्वार्टर में जाना जहां केवल चेन में बंध जबरदस्ती वह ले जाया जा सकता था। उसका बस चलता तो वहां कतई न जाता। ऐसे ही वह अन्य कुत्तों से मिलना-जुलना पसंद नहीं करता था। उसके इने-गिने सजातीय कुत्ता-कुतिया थे, जिनसे वह बाहर मेलजोल रखना पसंद करता था।

हमारे पुराने पड़ोस में एक सफ़ेद रंग की पोमेरेरियन कुतिया थी।

जिसके हीट में (रजस्वला) होने पर, बन्नी दीवाने हो जाते थे। उन दिनों बन्नी का व्यवहार किसी रोमियो से कम न था। बन्नी साहब जैसे ही दरवाज़ा खुलता, तीर की तरह निकल झाड़ियों में छिपते-छिपाते भागकर उसके पास पहुंच जाते थे। उन दिनों कई अन्य कुत्तों का 'जूली' (जो उस कुतिया का नाम है) की ओर आकर्षित रहना स्वाभाविक था। बन्नी साहब उन कुत्तों के जानी दुश्मन बन गये। वैसे वे कुत्तों से बोलते-चालते न थे लेकिन जूली पर अपना एकाधिकार जमाना चाहते थे, जूली का मालिक भी बन्नी के घर पर पहुंचने पर दरवाज़ा खोल देता था और अंदर घुसकर बन्नी का सत्कार दामाद जैसा होता। आस-पास की झाड़ियों में छिपे कुत्ते इसी ताक में रहते कि रति-क्रीड़ा के बाद बन्नी के बाहर निकलने पर अच्छी मरम्मत की जाये। कुत्तों में वैसे भी आपस में इस बात को लेकर काफ़ी लड़ाई होती है। जो कुत्ता अन्य कुत्तों को परास्त कर सके वही कुतियों को पाने का हक़दार होता है। बन्नी की क़िस्मत का सितारा तो हमेशा बुलंद रहता था। जूली के मालिक ने उन्हें सब सुख-सुविधाएं प्रदान कर दी लेकिन सजातीय लोग उनके पीछे हाथ धोकर पड़ गये।

एक दिन सुबह-सुबह बन्नी घर से चकमा देकर निकल गये। काफ़ी देर जब वह लौटकर नहीं आये तो लगा वह आज कहीं पिटकर न आयें। कई दिनों से उन पर कड़ी निगरानी रखी गयी थी, लेकिन उन पर तो प्रेम-भूत सवार था, न जाने किस समय निकल गये। ढूंढ़ने पर पता चला कि वह जूली के यहां से चल पड़े। झाड़ियों के भीतर छिपे हुए उन्हें देखा गया। आस-पास कई कुत्ते उत्तेजित हुए मंडरा रहे थे, मेरी आवाज़ पर वह जैसे ही बाहर निकले, अन्य कुत्तों ने उन्हें रपटाकर दबोच लिया, किसी तरह उन्हें बचाकर घर लाया गया। कई जगह काटने के दागों को डीटॉल लगाकर धोया और गोद में लिटाकर उसकी संवेगित मनोस्थिति को शांत किया गया। इसके बाद

बन्नी पर जूली के यहां न जाने की सख़्त पाबंदी लगानी पड़ी। वह काफ़ी रोये, लेकिन अन्य कुत्ते इनको जीने न देंगे, इस भय से किसी ने इन्हें घर से निकलने न दिया। बन्नी ने भी उस दिन के बाद से जूली के यहां जाने को जिद न की। केवल हम लोगों के साथ ही जाते और जब भी प्यार से 'जूली-जूली, आई लव यू' कहकर हम लोग उन्हें छेड़ते, वह प्रसन्न चित्त होकर नाचने लग जाते।

बन्नी के खोने के उपरांत जूली के मालिक ने जूली का पप खरीद लेने की मुझे सलाह भी दी थी। उनका कहना था कि यह बन्नी का ही रूप है। बच्चों ने बन्नी के वापस आने के बाद हठ की क्यों न बन्नी को जूली के पास ले जाया जाये? देखें वह पहले ही की तरह जूली को देखकर खुश होता है या नहीं। क्योंकि बच्चे भी बन्नी को 'जूली-जूली, आई लव यू' (जूली-जूली, मैं तुमसे प्रेम करता हूं)' कहकर छेड़ते रहते थे।

हम लोग जूली के यहां जाने के बारे में सोच ही रहे थे कि एक दिन जूली स्वयं आकर हमारे नये घर के दरवाज़े के पास खड़ी हो गयी। दरवाज़ा बंद था। अंदर कैसे बेचारी आती, लेकिन उनके रोमियो को पता चला कि जूली उनसे मिलने आयी हुई है वह कू-कू करके दरवाज़े के आस-पास चक्कर लगाने लगा और बार-बार दराज़ में सिर लगाकर सूंघता। उसकी खुशी का पारावार न था। जैसे ही दरवाज़ा खुला, जूली और बन्नी एक-दूसरे को बड़ी बेसब्री से आगोश में ले रहे थे। अब बन्नी की परीक्षा की ज़रूरत न थी।

जूली के मालिक ने इसे इतनी दूर अकेले कैसे आने दिया? इसका मालिक परेशान हो रहा होगा, ज़रूर सब जगह ढूंढ़ मची होगी। सोचकर मैं तुरंत बन्नी और जूली को लेकर पुराने पड़ोस आयी। जूली को पहुंचाकर बन्नी मेरे साथ तटस्थ हो वापस आ गये उन्हें उस पड़ौस से क्या लेना-देना? रामनगर से आने के बाद बन्नी में

अपने घर की चारदीवारी से अत्यधिक लगाव और सजातीय लोगों से खिन्नता बढ़ गयी थी ।

इंदौर से मेरा मौसेरा भाई अपने ढाई साल के पुत्र मुनमुन के साथ आया । भाई ने बन्नी का परिचय उस अबोध बालक से 'बन्नी भाई साहब' कहकर करवाया क्योंकि उम्र में बन्नी मुनमुन से बड़ा था । बच्चे तो मुझे बन्नी वाली आंटी कहते ही थे, लेकिन मुनमुन ने मुझे जब 'बन्नी वाली बुआ' कहा तो बड़ा अटपटा लगा, लेकिन मुनमुन का कुत्तों के प्रति अत्यधिक प्रेम देखकर मैंने भी कुछ न कहा । बन्नी और मुनमुन की दोस्ती दिनोदिन बढ़ती गयी । बन्नी भी बच्चों को बेहद प्यार करते थे और मुनमुन उनके लिए बाज़ार से बिस्कुट, आइसक्रीम आदि लाकर देते और बाहर जाने पर मां-बाप से 'बन्नी के घर चलो' कहकर जिद करते । मुनमुन को बिस्कुटों का वैसा ही शौक़ था जैसा बन्नी को, दोनों बैठकर बिस्कुटों के डिब्बे खाते-खिलाते । मेरे भाई-भावज ने इंदौर वापस जाते समय एक बड़ा-सा बिस्कुट का डिब्बा बन्नी को दिया और पैर छूकर मेरे से विदा मांगी । भोले मुनमुन ने मेरे पैर छुए और आगे बढ़कर बन्नी भइया के भी पैर छू लिये । आशीर्वाद देने के लिए बन्नी ने लपककर उसका माथा चूम लिया । बड़ा होने पर मुनमुन का स्नेह बन्नी ही नहीं सब ही कुत्तों पर अत्यधिक हो गया है ।

हमारे परिवार में बन्नी सबके ही प्यारे थे लेकिन उनकी हस्ती बड़ों से अधिक बच्चों को प्रियतर थी । यह मुझे पता चला जब मेरी भतीजी रीतू सपरिवार कलकत्ता से आयी । बन्नी के साथ खेलने आस-पड़ोस के बच्चे तो आते ही रहते थे, लेकिन घर में अंतरा (बेटी का नाम) और अमन (लड़के का नाम) के रहने से बन्नी का उत्साह भिन्न था । उनको यह अहसास था कि वह बच्चों के मामा हैं और उन्हें अपने भानजे-भानजी का विशेष आदर-सत्कार करना है । इसलिए

उन दिनों बन्नी मेरी भी प्रतीक्षा नहीं करते। सुबह-सुबह बच्चों के साथ टहलने निकल जाते। घर आते ही बच्चों के साथ नाश्ता करना पसंद करते। दूध पीने में कोई भी नखरा न करते आदि। बन्नी के व्यवहार में इस परिवर्तन से ख़ुशी हुई क्योंकि उन्हें घुमाने-फिराने से मुझे छुट्टी मिल गयी थी। मेरे सिवा वह किसी को अपने को घुमा लाने का अधिकार नहीं देते थे। चेन करवाकर ही उन्हें कोई बाहर ले जा सकता था जो केवल मेरी अनुपस्थिति में संभव था। मुझे घर में देखकर वह किसी हालत में अन्य किसी के साथ जाना स्वीकार नहीं करते थे। यदि चेन करने की कोई कोशिश करे तो उसे वह गुर्रा-गुर्राकर डराते-धमकाते थे या पसरकर ज़मीन पर बैठ जाते थे। खींचकर ले जाना असंभव-सा होता था। ये बातें जानकर अंतरा और अमन बेहद ख़ुश थे कि बन्नी उनके साथ ख़ुशी-ख़ुशी जाते हैं। वह तो ये भी चाहते थे कि बन्नी उनके साथ बाहर भी जा सके। उनके घर कलकत्ता भी, जहां वह अपने प्रिय मित्रों को बन्नी को दिखाकर मनोरंजन कर सके।

अंतरा उम्र में बड़ी होने के कारण अमन को अच्छी आदतें और शिष्टाचार सिखलाती रहती थी, लेकिन बाल्यावस्था होने के कारण स्वयं इसके लिए अनुशासित की जाती; विशेषतौर से खाने-पीने के मामले में वह बन्नी से बढ़-चढ़कर नखरे करती थी। अक्सर अपनी चॉकलेट, आइसक्रीम भी ख़त्म न करती और बन्नी की प्लेट में फेंक देती। वैसे भी बन्नी साहब को लड़कियों के लिए विशेष सहृदयता थी, अतः वह अंतरा को बेहद चाहते। एक दिन अंतरा नाश्ते की टेबल पर रूठकर बैठ गयी, रीतू (अंतरा की मां) ने अच्छे मैनर सिखलाने के लिए कहा, "शेम-शेम (लज्जा आनी चाहिए) तुम बड़ी बहन होकर इतनी देर से प्लेट सामने रखी बैठी हो। अमन ने नाश्ता ख़त्म भी कर लिया है, तुम दो मिनट के भीतर नाश्ता करके तैयार हो जाओ।

नहीं तो तुम्हें लेकर पापा नहीं जायेंगे, उन्हें ज़रूरी काम से जाना है।"

"पर मुझे नाश्ता नहीं करना है।" अंतरा ने तुनककर कहा।

"क्यों, यही नाश्ता अमन ने बड़े चाव से किया है। हम सब लोगों ने किया है, जो घर में बनता है वही खाते हैं।"

"लेकिन मुझे नहीं खाना, मैंने अमन से भी कहा था कि हम लोग पापा के साथ चलकर बाहर खायेंगे, जो नानी घर में नहीं बनाती हैं (निरामिष भोजन) लेकिन यह अमन... " अंतरा ने अपने मन की बात मां से कही।

"अच्छा, अब नखरे खत्म करो, बी ए नाईस गर्ल" (अच्छी लड़की बनो)। कहीं ये आदतें अमन भी न सीख ले, उसे तो वैसा खाना तुमसे भी ज़्यादा अच्छा लगता है। बन्नी को उससे भी ज्यादा लेकिन घर में जो भी बनता है वही खाते हैं।"

"मुझे तो ये नहीं खाना, ये मैं बन्नी की प्लेट में दे दूं, वह खा लेगा।" कहकर अंतरा ने बन्नी को बुलाया। लेकिन इस समय वह टस से मस न हुआ और आंखें मूंदे एक कोने में पड़ा रहा। इतनी देर में अमन तैयार होकर बाहर पापा के साथ घूमने जाने का प्रोग्राम बनाने लगा। अंतरा अपनी हार मानकर एक ग्रास चम्मच से मुंह में डालती और साथ ही साथ बिसूर-बिसूरकर रोने लगी। उसे इस तरह रोता देख बड़े लोगों में से किसी का हृदय न पसीजा। लगा लड़की लाड़-प्यार से बुरी आदतें सीख रही है, लेकिन बन्नी अंतरा का रोना सहन न कर पाये। कोने से निकलकर वह लपककर अंतरा की कुर्सी के पास आकर बैठ गये और लगे चुप कराने अंतरा को उसने चैन से रोने भी नहीं दिया। कभी उसके गाल पर अपना पंजा रख देते। कभी पंजों से आंसू पोंछते। कभी उसकी गोद में पंजों के सहारे खड़ा होकर अपना

सिर रख देते, कभी उसका मुंह तक चूम लेते। अपनी पूंछ को खड़ा करके चंवर की तरह हिलाते। उसकी क्रीड़ा को देख अंतरा का बाल-हृदय रोना भूल हंसी से खिल उठा। उसे विश्वास हो उठा, "बन्नी, तुम्हीं मेरे को सबसे ज़्यादा प्यार करते हो। मम्मी, पापा, अमन, छोटी-बड़ी नानी सब मुझे प्यार नहीं करते हैं।" कहकर उसने बन्नी को प्यार से गोद में बिठा लिया। नानी यदि बन्नी को भी अप्पू घर ले जाने दिया गया होता तो कितना मज़ा आता। वहां जाकर यह हमारे साथ झूला झूलता और न जाने कितने सारे गेम (खेल) खेलता, कितना अच्छा लगता इसे।

कलकत्ता पहुंचकर अंतरा के पत्रों में बन्नी की विशेष चर्चा होती। लगता है, वह अपने प्यारे साथी को वहां बेहद मिस (खोते) करती हैं। इसी तरह इन दोनों बच्चों का बड़े होने पर भी बन्नी के साथ लगाव बना रहा।

प्रिया का घर हमारे बिलकुल सामने था, रोज़ ही प्रिया बन्नी से मिलती-जुलती रहती थी। इसके अलावा अनु, अंबिका, रोमा आदि कई बन्नी की सहेलियां थीं, जो हमारे घर बन्नी के साथ बिस्कुट खिलाने की क्रीड़ा में चोर-चोर खेलती थीं। बन्नी इस खेल में उनका साथ पूरा-पूरा देते थे क्योंकि इसी बहाने उन्हें बिस्कुट खाने को मिलते रहते थे। अंबिका इन सबमें सबसे अधिक चतुर सयानी बालिका थी। वह एक बिस्कुट के छोटे-छोटे टुकड़े करके घर की खिड़कियां, दरवाज़े आदि के पीछे छिपा देती और बन्नी को खोजकर लाने पर शाबाशी देती। बन्नी दौड़-दौड़कर वे टुकड़े बीन-बीनकर लाते और अंबिका के सामने रखकर शाबाशी मिलने के बाद खाते, यदि बीच में खाते तो उन्हें मार पड़ती। इस भाग-दौड़ से उन बालिकाओं का जब मन भर जाता तो वे चौके में जाकर बिस्कुट खाने लगतीं। बेचारा बन्नी चौके में नहीं घुस सकता था। वह तो अनुशासन की चारदीवारी

में क़ैद था। ये लोग चौके में बैठकर खूब बतियातीं, हंस-हंसकर ठिठोली करती हुई बिस्कुट का डिब्बा साफ़ कर देतीं। प्रतिदिन के इस खेल से बिस्कुट के डिब्बे जब जल्दी-जल्दी खाली होने लगे तो मैंने अंबिका से कहा, "कहीं किसी कुत्ते को इतने सारे बिस्कुट खिलाये जाते हैं।"

"क्यों नहीं आंटी ? क्या कुत्ते का मन हमारी तरह खूब सारे बिस्कुटों को खाने का नहीं करता ?" पैरवी करते हुए अंबिका का जवाब था। बिस्कुट उस ज़माने में सस्ते मिलते थे। बच्चे को बुरा न लगे अतः मैंने चुप रहना हितकर समझा।

बालमन में किस बात को लेकर कॉमप्लेक्स (मानसिक ग्रंथि) बन सकता है, बहुधा हम बड़े लोगों को अपने कामकाज में इस बात का ध्यान नहीं रहता है, फिर किसी पालतू कुत्ते के मन में कौन-सी बात से कॉमप्लेक्स बनेगा, इसका ध्यान कैसे रहता ? एक दिन प्रिया का जन्म दिवस था। कई दिनों से हमारे घर प्रिया का आना-जाना लगातार हो रहा था। प्रिया की मम्मी भी इन दिनों आती-जाती रहती थी। कोई छोटी-मोटी चीज़ के बहाने या कौन-सी फ्राक प्रिया को पहनानी है, क्या-क्या बनवाना है आदि पूछने के लिए। प्रिया की सहेलियों की लिस्ट में मेरा नाम सबसे ऊपर था इसलिए जन्म-दिवस के दिन हमारे घर की घंटी का बार-बार बजना स्वाभाविक था। प्रिया को पूछना होता था कि सहेली को कौन-सा उपहार दिया जायेगा। फ्राक तो उसे अंत समय तक समझ में नहीं आ रही थी क्योंकि उस दिन उपहार में कई सुंदर-सुंदर फ्राकें उसकी नानी, दादी, अमेरिका वाली मौसी और बुआओं ने कानपुर से भेज रखी थी। बन्नी साहब हर बार घंटी सुनते ही आतुरता से प्रिया का इंतज़ार करते और कूदकर अंदर आने पर उसकी सुंदर फ्राक पर न्यू पिंच (नये वस्त्र पहनने की बधाई) सा कर देते।

शाम पांच बजे केक काटकर जन्म-दिवस की पार्टी का आयोजन था। सभी बच्चों को उस दिन पांच बजने का बेसब्री से इंतज़ार था। उनमें से कई तो रोज़ाना बन्नी के साथ खेलने आने वाले बच्चे थे। करीब साढ़े चार बजे जब मेरी घंटी बजी तो मुझे पता चल गया कि बच्चे मुझे पार्टी में लिवाने के लिए आ पहुंचे हैं। किवाड़ खोलकर मैं तैयार होने चली गयी। बन्नी बच्चों को सजा-धजा देखकर अति प्रसन्नचित्त थे। पांच बजने का समय होने वाला ही था। मैं बन्नी के सहारे खुला घर छोड़कर प्रिया के घर चली गयी। वैसे भी हमारा घर आमने-सामने था। दरवाज़ा में ताला किवाड़ बंद करते ही अपने आप लग जाता था।

प्रिया के जन्म-दिवस पर बड़ा-सा केक आया था, जिसे हम बड़े और सब बच्चों ने मिलकर प्रेमभाव से कटवाया। मगन होकर 'हैप्पी बर्थ डे' कहकर तालियां बजायीं, गाना गाया, खाया-पीया और, तरह-तरह के खेल खेले, जिसमें जीतने में हरेक को कोई अच्छा-सा छोटा-मोटा उपहार मिला लेकिन सबसे ज़्यादा उपहार अंबिका ने जीते। हम लोग पार्टी में ख़ुशियां मनाकर विदा लेने वाले थे कि प्रिया के पापा ने कहा, "बन्नी के घर से बहुत देर से आवाज़ें आ रही हैं, लगता है कोई लगातार दरवाज़ा पीट रहा है। कोई बंद तो नहीं हो गया ?"

भागकर मैंने ताला खोला और जैसे ही दरवाज़ा खुला, बन्नी तीर-से प्रिया की पार्टी में शामिल होने के लिए दौड़े। किसी तरह मैंने उन्हें रोका। इतनी देर में उनके कई प्रिय साथी मेरे घर भागकर आ गये थे, मैंने फ़ौरन दरवाज़ा बंद कर लेना उचित समझा क्योंकि मैं बन्नी की जिद से परिचित थी लेकिन पार्टी में जाकर उसका अपमान होता। वह बिन बुलाया मेहमान ही नहीं, एक कुत्ता था जिसको ऐसे मौक़े पर खाने की मेज़ पर आने की आज्ञा कौन देता ? इसलिए मैं उन्हें

अपने साथ पार्टी में नहीं लेकर गयी थी लेकिन लगता था कि इस बात से बन्नी साहब बेहद गुस्सा थे। मैं अनुमान नहीं कर सकती थी कि वह इतनी अधिक बगावत कर बैठेंगे, जैसे ही हम लोग अपने ड्राइंग रूम में दाखिल हुए, वहां चारों ओर रुई के टुकड़े फैले पड़े हुए थे। बन्नी ने गुस्से में कोच की सारी रुई एक धुनिया की तरह नोच-नोचकर निकाल फेंकी थी। कोच का सत्यानाश हो गया था। मैंने जैसे ही बन्नी को डपटकर बुलाया, वह ग्लानि में सिर छिपाये मार खाने के लिए मेरे सामने आ गये। जैसे उन्होंने बहुत बड़ा अपराध किया है। जितना चाहो उतना मार लो।

ऐसे अबोध अपराधी को इस बगावत के लिए क्या दंड देती ? मुझे एक गिलाफ में सारी रुई इकट्ठी करनी पड़ी। कोच तो बेकार हो गयी थी। बच्चे बन्नी के इस कारनामे से चकित थे। वह अवश्य बन्नी को डपटकर बुलाते और माफ़ी मांगने की मुद्रा में खड़े होने के लिए उसे प्रेरित करते। "प्रिया ने तुमको पार्टी में नहीं बुलाया था तो आंटी की कोच को क्यों तोड़ा ? बोलो, अब तो नहीं तोड़ोगे।" निस्संदेह हमारी मान-मर्यादाओं को सुरक्षित रखने में किसी किशोर मन के अंदर भयंकर आग भड़क जाती है और उसी में उनसे अपराध हो जाते हैं।

बन्नी की इस बगावत का पता जब मेरे यहां काम करने वाली जानकी और उसके बच्चों को लगा तो वह अपनी खुशी न छिपा सके, क्योंकि प्रिया की सालगिरह पर निमंत्रण न मिलने का उन्हें भी बुरा लगा था। अब तो उन्हें बन्नी पर बेहद नाज़ था कि उसने बगावत करके प्रिया के घर तक यह बात पहुंचवा दी कि उसे क्यों नहीं बुलवाया गया ? जानकी बन्नी को रोज़ रोटी बनाकर खिलाती थी, अपने बच्चों की तरह प्यार करती थी। उसने प्यार से थपथपाते हुए कहा, "शाबाश बन्नी ! प्रिया रोज़ तुम्हारे और मीनू, पिंकी के साथ खेलती

थी लेकिन सालगिरह के दिन न तुम्हें बुलाया गया, न मेरे बच्चों को। यह भी कोई तरीका है, जिनके साथ रोज़ उठे-बैठे, खाये-पीये उन्हीं को न बुलाये, क्योंकि हम गरीब हैं, क्या बड़े आदमी के बच्चे ही पार्टी में खा-पी सकते हैं? बहन जी तुम्हें बंद करके चली गयीं, मेरे ही घर चेन करके दे जातीं तो उनका इतना बड़ा नुकसान न होता।" जानकी ने मेरे नुकसान के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के लिए कहा।

इस घटना के बाद मैं बन्नी को अपने साथ लिवा ले जाती या जानकी के यहां चेन करके छोड़ जाती। उसके बच्चे पिंकी, मीनू आदि उसे प्रेमवश प्रसन्न रखते। यदि मुझे देर हो जाती तो जानकी उसे खाने को भी देती, लेकिन बन्नी चेन में बंधे होने के कारण कुछ अपमानित-सा महसूस करता और अनमनापन अपने व्यवहार में परिलक्षित करता। चेन में बन्नी को तभी बांधा जाता था जब वह कोई अपराध कर बैठते थे या कोई बाहर वाला उन्हें घुमाने आदि ले जाता, जिसके साथ अन्यथा वे जाना पसंद नहीं करते थे। वैसे बन्नी की गति अबाध रहती थी। वह घर वालों के साथ खुला चलने का आदी था। जहां-जहां हम लोग जाते, वह आगे-पीछे भागता हुआ साथ-साथ रहता। घर में तो वह एक कमरे से दूसरे कमरे दौड़ते रहते, केवल चौके में वह नहीं जा सकते थे। उस लक्ष्मण रेखा को कदाचित् ही उसने पार किया हो। वह जान-पहचान वालों एवं परिवार के सभी सदस्यों के पदचाप को सूंघकर पहचान लेते थे इसलिए घंटी बजने से पूर्व वह दरवाज़े पर पहुंच जाते और विशेष आवाज़ें निकालकर मालिक को चेतावनी देते कि जल्दी दरवाज़ा खोलो; देखो, कौन मिलने आया है। उनकी तत्परता एवं स्वागत-सत्कार का व्यवहार मन को मोह लेता था। जैसे यदि मेरी बहन आयी है तो वह पप्प बनकर आवाज़ें निकालता और उनका सत्कार गोद में बैठकर करता और ऐसा लगता कि वह उन्हें बता रहा है कि तुम इतने दिनों बाद क्यों

आयीं, क्यों मेरी सुध-बुध खो बैठी थीं। मेरी घनिष्ठ मित्र का स्वागत वह उनकी साड़ी पर अपने आगे के दोनों पैरों को जमाकर करता, ख़ुशी से नाचता जाता और जब तक वह कुर्सी पर बैठ उन्हें प्रेम से थपथपा न दे, उनका पीछा न छोड़ता। कूद-कूदकर चढ़ने के चक्कर में कई बार उनके पंजे में फंसने के कारण साड़ी फट भी गयी और मैंने बहुत चाहा कि वह इस तरह का प्रेम दर्शाना बंद कर दे लेकिन मना करने पर वह मेरे ऊपर गुर्राता और मित्रों को मुझे ही मना करना पड़ता, "अरे, उसे भी मिलने दो, थोड़ी देर में शांत हो जायेगा, मेरी साड़ी पुरानी थी इसीलिए इतनी आसानी से फट गयी।"

यदि कोई अतिथि बन्नी की ओर ध्यान न देता और मुझसे बातचीत करने में व्यस्त हो जाता, उस स्थिति में बन्नी एक शैतान बच्चे की तरह अतिथि का ध्यान अपनी ओर खींचने में न चूकते। एक अफ़सर अतिथि ने एक बार उसे प्रेम से थपथपाया लेकिन वह गंभीर वार्तालाप में व्यस्त हो गये। थोड़ी देर तक बन्नी भी चुपचाप कोने में जाकर लेटे रहे लेकिन एकाएक मैंने देखा कि बन्नी ने कचरे की टोकरी से कुछ गंदगी लाकर ठीक अफ़सर साहब के पैरों के पास रख दी है। इस शरारत ने उनकी ओर ध्यान देने के लिए अफ़सर को बाध्य कर दिया।

बन्नी की अपनी ओर ध्यान आकर्षित करवा लेने की कला का नमूना उनके शैशवकाल में ही मिल गया था। जब पहले दिन उन्हें रात को कचरे वाली कोठरी में एक टोकरी में अच्छी तरह गर्म कपड़ों में लिपटाकर और एक महीन ऊन से बांधकर सुला दिया गया था, वह न जाने कैसे उस जाल से अपने आपको निकालकर एक काकरोच का शिकार अपने मुंह में दबाये कू-कू करते हुए हाज़िर हो गये थे। हमने कोशिश की कि उनका शिकार तुरंत फेंक दिया जाये लेकिन वह उसे मुंह में दबाये रहे जैसे अपने भयंकर दुश्मन पर वह हावी होने का

प्रशिक्षण ले रहे थे। उनकी इस शिकारी प्रवृत्ति को पूरा बढ़ावा दिया गया। हम लोगों को पता था कि बन्नी ने यह प्राकृतिक गुण अपने पिता से विरासत में पाया है। उसका पिता डेशून जाति का और मां पामेरियन जाति की थी। जिस किसी को बन्नी अपना दुश्मन समझ बैठते उस पर आक्रमण जी-जान लगाकर करते और उसे परास्त करके ही दम लेते। यह प्रभावशाली आक्रमण शक्ति उनके बुढ़ापे तक रही। बचपन से ही वह चूहा, घूस, बिल्ली आदि के जानी दुश्मन थे। बंदरों को वह भौंक-भौंककर भगा देते थे। बुढ़ापे में उन्हें मोर जैसे सुंदर पक्षी को भौंक-भौंककर उड़ाने में मज़ा आता था। अपनी विजय पर वह फूले नहीं समाते थे और हम लोग भी उनकी सन्निधि से सुरक्षित अनुभव करते थे। अक्सर घर को उनके सहारे छोड़ दिया जाता था। उनके रहते चोरी होने का प्रश्न ही नहीं उठता। पराजित होने का कटु अनुभव बन्नी को शायद ही हुआ होगा। एक दफ़े की बात है कि घर में एक बड़ी-सी घूस आ गयी जिसकी आवाज़ और गंध से बन्नी शंकित हो उठे और एक ख़ूंखार जानवर की तरह भौं-भौं करके उसे बाहर आने के लिए काफ़ी देर तक ललकारते रहे। परेशान होकर उस घूस को बाहर गरदन निकालना पड़ा और बन्नी ने गरदन को धर-दबोचा। वह भी इतनी जल्दी हार कैसे मान जाती, जीवन-मरण का प्रश्न था। इसी चक्कर में दोनों की लड़ाई होती रही। कभी वेग से वह बन्नी को काट लेती और ये गुर्राकर गर्जना करते, कभी ये उसकी गरदन पर प्रहार करते और कभी दर्द से ची-चीकर वह सिहर उठती। हम लोगों ने लाख मना किया किंतु बन्नी ने उसका पीछा न छोड़ा और अचानक उस बेचारी की गरदन उनके दांतों के बीच आ गयी। बन्नी ने उसका ऐसा दम घोटा कि वह मर गयी। आश्चर्य की बात यह थी कि उस घूस का पूरा शरीर बाहर निकला पड़ा था लेकिन ख़ून की एक बूंद भी पृथ्वी पर नहीं पड़ी थी। इसके बाद बन्नी ने काफ़ी देर तक अपने

शिकार को वहां से हटाने नहीं दिया। चारों ओर घूमकर निगरानी करते रहे और अनुनय-विनय के बाद ही अपने प्यारे छोटे बहादुर को (जानकी का देवर) उसे फेंक देने की इजाज़त दी।

बन्नी और छोटे बहादुर की मित्रता घनिष्ठ थी क्योंकि वही मालिक न होने पर चेन द्वारा उन्हें टहलाने ले जाता था। टिक निकालता, बर्तन धोता और रात में अपने गर्म बिस्तर पर साथ सोने की अनुमति दे देता। मालिक तो उन्हें अपने से दूर गद्दी पर सुलाता था जबकि छोटा बहादुर बन्नी की गद्दी की रुई आदि को ठीक करता और अक्सर पिंकी, मीनू (जानकी के बच्चे) की तरह बन्नी को अपनी गोद में बिठाकर प्यार करता जैसे वह भी कोई बच्चा हो।

हमारे इस नये पड़ोस में हिज़ड़ों का काफ़ी आतंकवाद छाया हुआ था, जब कोई नवजात शिशु की खुशी मनायी जाती, हिज़ड़े आकर काफ़ी बेहूदगी से नाचते-गाते और घर वालों से अच्छी-खासी रक़म वसूल करके विदा होते। जो कोई भी उन्हें पैसे देने में आनाकानी करता उसे गाली-गलौज के अलावा नवजात शिशु को उठा ले जाने तक का भय बना रहता। हमारे यहां जानकी को बच्चा पैदा हुआ था। अतः हिज़ड़ों का हंगामा होगा, इसकी आशंका सबको सताती रहती। एक दिन मैं अकेली घर में थी बन्नी को दरवाज़े पर आहट लेते रहने के लिए बैठाकर मैं स्नानगृह में चली गयी। गर्मी के दिन थे, मैं स्नान करने में मग्न थी कि लगातार ज़ोर-ज़ोर से घंटी बजने की आवाज़ ने मुझे सचेत किया। लेकिन फ़ौरन दरवाज़े पर पहुंच जाना संभव न था, बन्नी साहब के सतत् भौंकने की आवाज़ें मेरे कानों में आने लगीं, जिससे स्पष्ट था कि कोई असभ्य अपरिचित मेहमान घंटी बजा रहा है। आश्चर्य हो रहा था कि नौकर लोग बंगले के ही क्वार्टर में हैं, क्यों

नहीं वहां आकर मेहमान से बाचतीत करके घंटी बजवाना बंद करते। बेचारा बन्नी तो भौंक-भौंककर घर को उठाये हुए है ।

जल्दी-जल्दी कपड़े पहनकर जैसे ही मैंने दरवाज़ा खोला बन्नी साहब बाहर निकलकर टूट पड़े । मैंने कई लोगों की सीढ़ियों से बेतहाशा भागते हुए पैरों की आवाज़ें सुनी । मैं भी दौड़कर बालकनी से यह देखने पहुंची कि बन्नी किन असभ्य मेहमानों के ऊपर हावी हो रहे हैं। मैदान में काफ़ी लोगों की भीड़ जमा थी और तीन-चार हिजड़े भागते हुए कह रहे थे, "लेना-देना तो दूर रहा, अपना कुत्ता हमारे ऊपर दौड़ा दिया । बाप रे बाप, क्या ज़माना आ गया है ।" मुझे पता था कि उनका बड़बड़ाना जल्दी ही गाली-गलौज में परिवर्तित हो जायेगा इसलिए बन्नी को बुलाकर दरवाज़ा बंद कर लेना ही हितकर है । भीड़ को तो मज़ा आना स्वाभाविक है । हिज़ड़ों की ऐसी शामत और कौन कर सकता है ? जानकी इसीलिए चुपचाप अपने क्वार्टर में बैठी रही क्योंकि उसे पता है कि हिज़ड़े नवजात शिशु के लिए नाचने-बजाने और रुपये वसूल करने आये हैं। उसका चौकीदार पति बड़ा बहादुर हिज़ड़ों को भगा नहीं सकता लेकिन प्यारे बन्नी ने यह कमाल का काम कर दिखाया। इसके बाद हिज़ड़े हमारे मकान में कभी नहीं आये, जिससे जानकी बिलकुल निर्भीक हो गयी । उसका स्नेह बन्नी पर पहले से अधिक हो गया, जो स्वाभाविक था ।

पिंकी, मीनू अपने नन्हे भाई को लेकर मुझे दिखलाने आतीं। मैं भी उस नवजात शिशु को गोद में लेकर दुलार करती । लेकिन बन्नी साहब इस नवजात शिशु को मेरा गोद में बिठाकर स्नेह देना स्वीकार न कर पाते। वह काफ़ी उद्विग्न हो जाते, मेरे आसपास मंडराने लगते। बच्चे को गोद से उतार दूं और उनकी तरफ़ अपना ध्यान दूं, यही उनकी

चेष्टा होती । उनका यह ईर्ष्यालु व्यवहार हमारे बीच विनोद का प्रसंग बन जाता । मुझे भी आश्चर्य होता था कि ऐसी ईर्ष्या इसने परिवार के किसी नवजात शिशु को गोदी में लेने पर नहीं दिखलायी। इस बच्चे के प्रति मेरा लगाव न हो जाये, बन्नी साहब इतना अधिक क्यों चिंतालु हैं ? मैंने देखा वह जानकी की गोद में बच्चा आ जाने से विश्वस्त हो जाते हैं, उनका अभिप्राय क्या यह था कि बच्चा मां की गोद में पूर्ण सुरक्षित है । विशेषतया जब जानकी अपने शिशु को स्तनपान कराती तो बन्नी बेहद शांत मुद्रा में बैठ जाते ।

बन्नी में 'दुबे' खानदान के सदस्य कौन-कौन हैं, इसकी परख देखने को मिली, शायद यह भी वह सूंघकर भांप लेता था । निस्संदेह विशेष प्रेम भाव मिलने के कारण परिवार के प्रत्येक सदस्य का वह मन मोहना बन गया और घनिष्ठ इष्ट मित्रों एवं अपने डॉक्टर द्वारा 'बन्नी दुबे' कहलाने का भाग्यशाली कुत्ता बन बैठा । मैं उसका छोटा-मोटा उपचार स्वयं कर लेती, लेकिन इंजेक्शन आदि लगवाने मुझे नियमित रूप से कुत्तों के एक प्रसिद्ध डॉक्टर के पास जाना पड़ता। ज्यादातर कुत्ते डॉक्टर के पास पहुंचकर शांत रहते हैं, शायद बच्चों की तरह उन्हें भी डॉक्टर कहीं सुई न लगा दे, इसका भय बना रहता है लेकिन डॉक्टर की मेज़ पर लिटा देने के बाद भी बन्नी ने कभी कोई अभद्र व्यवहार नहीं किया। अन्य कुत्तों की तरह उनको बांधकर, मुंह बंद करके सुई लगानी नहीं पड़ी । मैं उन्हें कसकर पकड़ लेती और अनुभवी डॉक्टर साहब सुई लगा देते और उसकी पीठ थपथपाकर कहते, "बन्नी दुबे बड़ा जेंटल (मृदुल स्वभाव) है ।"

बन्नी के आने के बाद हमारे परिवार में केवल ईशा (मेरे सबसे छोटे भाई की अंतिम संतान) का जन्म हुआ । अतः ईशा को वह अत्यधिक प्रेम करते थे। ईशा के बड़े भाई अमिय के साथ उनकी दोस्ती और लड़ाई समवयस्कों जैसी होती थी, लेकिन ईशा के लिए दुलार

बड़े-बूढ़ों जैसा। छोटा भाई सपरिवार दिल्ली आया हुआ था। ईशा उस समय तीन-चार महीने की शिशु थी। बन्नी साहब पूरे समय ईशा के पलंग के नीचे घुसकर चौकसी करते रहते, जैसे ही वह सोकर उठती वह भागकर हम लोगों को सचेत करते कि बच्ची सोकर उठ गयी, उसे जाकर देखो। अतः उसकी मां कहती थी कि इस बच्ची का गुस्सा अपनी दादी की तरह है, एक मिनट की देर नहीं हुई कि यह गुस्सा हो जाती है। बच्चों जैसी बात ही न कहीं है कि पलंग पर लेटे कुनमुनाये और धीरे-धीरे रोना शुरू करे। इसे तो लगता है जैसे किसी बिच्छू ने काट लिया हो। लेकिन बन्नी की सतर्कता ने धीरे-धीरे सबको बाध्य कर दिया कि फ़ौरन भागकर ईशा को उठाया जाये और उसके रोने-धोने को रोकने का उचित प्रबंध किया जाये। ईशा की मम्मी को बन्नी चैन से न बैठने देता-न खुद चैन से बैठ पाता। बार-बार बच्ची के पलंग और मम्मी तक की दूरी को भागकर तय करते रहते और कू-कू की एक अनोखी आवाज़ निकालते। जिसका मतलब था कि सब काम छोड़कर तुरंत ईशा को संभालो। यदि वह अनसुनी करती तो मेरे पास आकर उसे उठा लेने के लिए पूरी चेष्टा करता और मेरे उठा लेने पर वह बेहद खुश होता। पास बैठकर देखता रहता कि मैं ईशा को दुलार कर चुप करा पा रही हूं या नहीं। बन्नी ने ईशा को खिलाने-पिलाने, दुलारने आदि में कभी ईर्ष्या व्यक्त न की। उसे तो वह परिवार का अभिन्न सदस्य मानता। बन्नी के वात्सल्य रस को परिवार के छोटे बच्चों के अतिरिक्त (जिसमें अंतरा, अमन, ईशा आदि हैं) गौरैयों, चिड़ियों के बच्चों के साथ परिलक्षित होता देखा गया। हमारे मकान में इन चिड़ियों का मैटर्निटी होम (मातृत्व एवं शिशु पालन का अस्पताल) सा था। ऋतु आने पर घोंसले बनाये जाते, अंडे सेये जाते, बच्चे निकलकर ज़मीन पर फुदकते रहते। बन्नी का दूध, खाना आदि बेहिचक चिड़ियां एवं उनके बच्चे चुगते रहते, लेकिन बन्नी साहब को

उन पर कभी गुस्सा न आता। गंदगी को देख हम ही लोग चिड़ियों को भगाने के लिए जब दौड़ते वह भी हमारे पीछे-पीछे भागते लेकिन अपने अन्य दुश्मनों की तरह उनके पीछे नहीं पड़ते। गौरैयों को बन्नी की 'मौसी' कहकर समझौता करना पड़ता। यही नहीं बन्नी उनके बच्चों को बचाने के लिए बिल्ली को घर में नहीं घुसने देते और यदि फड़फड़ाता हुआ बच्चा कभी ज़मीन पर गिर पड़े तो उसे सावधानी से घोंसले में रखने के लिए हम लोगों को प्रेरित करते। वही वात्सल्य रस में पगे बन्नी अमिय के साथ प्रतिस्पर्धा में किसी बाज़ से कम न थे। एक बार मैं यात्रा से लौटी थी, आते ही अमिय और बन्नी ने कस्टम अधिकारी की भांति मेरा सामान खोलकर देखना शुरू कर दिया। मैंने तुरंत मिठाई का एक टुकड़ा अमिय को दिया और दूसरा बन्नी को क्योंकि हवाई जहाज़ की यात्रा में केवल एक ही मिठाई दी गयी, जिसे मैंने संजोकर रख लिया था। बन्नी ने झटपट अपना हिस्सा खा लिया और पलक झपकते ही अमिय के हाथ से उसका हिस्सा छीन लिया। बेचारे अमिय अपने को बन्नी से परास्त होता देख खिसिया कर रह गये। बन्नी पलंग के नीचे घुस तुरंत वह मिठाई का टुकड़ा समूचा निगल गये थे। जिसे मारकर भी निकाला नहीं जा सकता था। ऐसा नटखट व्यवहार बन्नी ईशा के साथ नहीं करते थे, ईशा के हाथ से चीज़ को झपटते या चुराकर ले जाते नहीं देखा गया। इसी तरह बिल्ली के बच्चे आकर उनका दूध पी जाते, वह लपककर उन्हें कभी नहीं भगाते या डराते थे। क्या कुत्ता जैसा जानवर उम्र का लिहाज़ कर सकता है ? यह प्राकृतिक गुण है या मनुष्यों के साथ रहने से वह सीख जाता है। ये कहना संभव नहीं क्योंकि कहते हैं कि कुत्ते में तर्क-शक्ति नहीं होती तब ऐसी मान्यताएं कैसे बनतीं ?

हमारे घर में रसोई बनते ही पहली रोटी बन्नी को दिये जाने का प्रतिदिन का नियम था लेकिन जब अन्य बच्चे आये हुए होते तो

बन्नी इसी प्रतीक्षा में रहते कि बच्चों के साथ-साथ ही खायें। उनकी रोटी टुकड़े करके दाल-भात, सब्जी, दही आदि के साथ मिलाकर उनके प्याले में दे दी जाती लेकिन वह बच्चों की मेज़ पर चक्कर लगाते रहते, विशेषकर जब मेरे भानजे गुल्लू, भाई-जी और बाबी आये हुए होते तो उनका व्यवहार अत्यधिक बराबरी का हो जाता। बच्चों का कहना होता कि यह चौके में जाकर नानी जी से पूछताछ नहीं कर सकता। लेकिन हमारे चक्कर लगाकर देखना चाहता है कि कौन-सी चीज़ उसे परोसी नहीं गयी है, कौन कितना कम्पीटीशन (स्पर्धा में) से खाना खा रहा है। इसमें संदेह नहीं था कि बच्चों को उत्साह से खाता देख या अपने मनपसंद की चीज़ों को दुबारा मांगता देख, बन्नी भी और लेने की फ़रमाइश कर देते थे। वैसे तो हम बड़ों के साथ उन्हें एक बार प्याले में जो कुछ भी दिया जाता, वही खाकर संतुष्ट हो टेबल के नीचे शांत बैठ जाते थे।

बन्नी और गुल्लू जी का मल्लयुद्ध तो अक्सर होता रहता। दोनों एक-दूसरे से डटकर मुकाबला करते, गुल्लू बन्नी को उत्तेजित करने के लिए कुत्तों की आवाज़ें निकालते, जिससे बन्नी अधिक गुर्राकर हावी होते और एक बार इसी युद्ध में गुल्लू का घूंसा लगने के कारण बन्नी का एक दांत टूटकर बाहर गिर आया। बन्नी ने लपककर वह समूचा दांत निगल लिया, किसी क़ीमत पर वह पीछे नहीं हटने वाले थे, चाहे दांत निगल लेने के कारण उन्हें पेट में काफ़ी दर्द हुआ। दर्द को लेकर वह केवल अपने मालिक के पास ही आना पसंद करते थे। शारीरिक किसी भी काम को अन्य से करवाने में वह अपनी हिजो समझते थे यद्यपि उनके हितैषी अनेक थे।

बरसात में बन्नी बाहर जाकर टिक (जूं जो कुत्ते के बालों और अन्य गुप्त स्थानों में चिपककर जोंक की तरह खून चूसती रहती है) ले आते थे, उसकी नियमित सफ़ाई मालिक को करनी पड़ती थी।

नित्य बाल ब्रश आदि से काढ़कर टिक निकलवाना बन्नी को पसंद था। यही काम कोई दूसरा करता तो वह थोड़ी ही देर में उसे डरा-धमका देते या गुर्राकर भाग जाते। मालिक को भी उन्हें पकड़कर बैठना पड़ता था। एक बार मैं उनके टिक निकाल रही थी और वह मुझसे छुटकारा पाने के लिए भरसक कोशिश कर रहे थे। बाबी बैठा उनकी हरक़तों को देख रहा था, उससे न रहा गया, पास आकर उसने बन्नी को चारों खाने चित्त करके सारे टिक निकालकर दम लिया। लेकिन टिक साफ़ करना काफ़ी दुःखदायी कार्य होता है मालिक और कुत्ते दोनों के लिए, विशेषकर वृद्धावस्था में जबकि कुत्ता अपने पंजों द्वारा टिक को मारने के बजाय पंजों में पलने देता और वहां अंडे देने के कारण उनकी संख्या दिन-दूनी रात-चौगुनी होती जाती है। यह बात तो बन्नी के पूर्ण यौवनावस्था की है। टिक की बातें तो बन्नी के बुढ़ापे में दुःखदायी थीं लेकिन इसकी चर्चा इसलिए की गयी कि बाबी द्वारा चित्त किये जाने पर भी बन्नी ने कोई प्रतिवाद नहीं किया क्योंकि वह हृदय से बाबी के आभारी थे। मालिक की तरह उसने भी टिक निकाल लिये जो कदाचित् ही कोई बच्चा जल्दी-जल्दी करना पसंद करता है।

बन्नी की जाति के पामेरेरियन कुत्ते हमारे आस-पड़ोस में कई लोगों के पास थे लेकिन देखने-सुनने में जितने कमनीय बन्नी थे उतना आकर्षक दूसरा कुत्ता या कुतिया न थी। सुंदरता के अलावा बन्नी दौड़ते बेहद तेज़ थे और चेन में न बंधे होने पर भी बड़े अनुशासित ढंग से मालिक के साथ सैर करने निकलते थे। अन्य कुत्तों के मालिकों को इस बात को जानने की विशेष जिज्ञासा थी कि बन्नी को ट्रेनिंग (प्रशिक्षण) कैसे दी गयी है? पड़ोस का स्नोई कुत्ता चेन से खुलते ही बाहर भाग जाता था और घंटों मालिक को ढूंढ़कर चेन में बांधकर वापस लाना पड़ता था और वह अपनी क्षणिक स्वतंत्रता को खो बैठता था जबकि बन्नी को घुमाते समय भी चेन करने की आवश्यकता न थी

घर में तो उनकी गति अबाध थी ही, बाहर भी वह मालिक के आगे-पीछे रहते। मालिक को पता लग जाता था कि वे कब और कैसे मूड (मनोभाव) में हैं। नित्यकर्म से निवृत्त होने के लिए उन्हें कितनी देर बाहर रहना है, कितनी तेज़ी से दौड़ लगानी है आदि। उनकी मलमूत्र के क्रिया-कलाप को देख-देखकर लखनऊ के नवाबों की याद आ आती थी। सुनते हैं, नवाब लोगों को दिशा के लिए ले जाने में उनके नौकर-चाकरों को काफ़ी परेशानी उठानी पड़ती थी, वैसी ही कुछ परेशानी उस व्यक्ति को होती जो उन्हें सुबह-सुबह टहलाने के लिए ले जाये। मालिक बेचारा बन्नी की आदतों को सुधारने का श्रेय कैसे ले सकता है?

मैंने बन्नी को करीब आंख खुलते ही पाला था। वह हमारे घर दिसंबर माह के अंतिम सप्ताह में बड़ी सर्दी के दिनों में एक बासकेट (डलिया) में गर्म कपड़ों से लिपटाकर बरामदे में रखा गया था। इसे अनायास एक उपहार की तरह मुझे मिसेज़ मिश्रा ने दिया था क्योंकि इस पप को किसी भी क़ीमत पर डॉ० मिश्रा अपनी पुत्री रश्मि को रखने की अनुमति नहीं दे रहे थे। रश्मि भी उसे अपनी सहेली को लौटाना नहीं चाह रही थी। भाग्यवश मिसेज़ मिश्रा ने मुझे सूचित किया कि एक बड़ा सुंदर-सा पप उनके पास है जो भी पहले आयेगा वह उसी को पप दे देंगी क्योंकि उनके पति किसी भी हालत में दूसरा कुत्ता रखने के हक़ में नहीं हैं। उनका पुत्र हर्ष रात भर पप को लेकर कुर्सी पर बैठा रहा है, जिससे सर्दी लग गयी है। कई अन्य लोगों को टेलीफ़ोन पर पप ले जाने के लिए कह दिया है। अतः सबसे पहले आकर मैं ले जाऊं, थोड़ी देर में पप के लेने उनके घर भीड़ लग जायेगी।

अपनी मां से बिना विचार-विमर्श किये एक कुत्ते के शिशु को घर ले आने में मैं डर रही थी लेकिन एक सुंदर पप को देखकर

किसका मन नहीं ललचाता। मैंने मिसेज मिश्रा को धन्यवाद देकर विदा ली और बन्नी को सांता क्लास (Santa Clawse) की बड़े दिन पर भेंट समझी। रश्मि ने उनका नाम पहले ही जो 'बन्नी' रख दिया था। बन्नी ने अपनी ग्रांड मदर (जो क्रिश्चियन धर्म में चर्च द्वारा बपतिस्मा करके नाम रखती हैं) का सम्मान जीवन भर किया क्योंकि बन्नी के अलावा रश्मि ने अनेक कुत्तों को अच्छे घर-बार में बसाने का बीड़ा उठा रखा है। 25 दिसंबर का बड़ा दिन हमारे घर में बड़े धूमधाम से मनाया जाता है, इसलिए नहीं कि हम लोग क्रिश्चियन धर्मावलंबी हैं। उस दिन बड़े भाई का जन्म-दिवस मां विशेष उल्लास से मनाती आयी है। अतः मुझे विश्वास था आज के दिन इस सुंदर उपहार को लौटा देने के लिए वह मुझे आदेश न देगी।

उस समय बन्नी का आकार एक सफ़ेद रुई के हल्के-फुल्के गोले जैसा था जिसको हथेली में रखकर मैं घर में पहुंची। उसकी काली-काली आंखें और ओठ ज़्यादातर बंद ही रहते थे। आवाज वह धीमी निकालता और रेंगकर चलता था। जाड़ा अधिक होने के कारण गर्म कपड़ों में लिटाकर रखना अति आवश्यक था, लेकिन वह मानव स्पर्श की अनुभूति के लिए लालायित रहता था। मेरी मां बन्नी को देख स्तंभित हो बोली, "अरे, इसकी आंखें भी ठीक से नहीं खुली हैं, इसकी मां से क्यों अलग कर दिया? इसे कैसे पालोगी? अच्छा, अब आ ही गया है तो इसे बाहर के बरामदे में ही रखो। नहीं तो यह सारे घर में घूमता फिरेगा। कुत्ते बाहर जाकर कहां-कहां मुंह मारते रहते हैं, मुझे पसंद नहीं है कि वह घर की कोई चीज़ छुए या चौके में घुसे।" गनीमत है कि मां ने बन्नी को वापस दे देने की सलाह नहीं दी क्योंकि उनके अनुसार कुत्ता घर के बाहर बैठाया जाता है, उसे सबसे आखिर की बनी रोटी तोड़कर बाहर डाली जाती है। यदि उसे खुजली आदि कोई रोग हो जाये तो अवश्य मैंने अपनी दयालु मां को उसे दवाई लगाते हुए

देखा था। अतः उनकी आज्ञा का पालन करने के लिए बरामदे में गर्म बिस्तरों में लिपटाकर बन्नी को सुलाने के लिए मैं विवश थी।

जाड़े की सर्दी में बन्नी को बाहर अकेला छोड़ना उचित न था इसलिए मेरी मां ने उसको बिस्तर सहित कचरे की कोठरी में सुला देने की अनुमति दी। मैंने बन्नी का बिस्तर एक सुंदर-सी बंद डोलची में बिछाया और बन्नी को अच्छी तरह बांधकर सुला दिया। हम सब लोग अपनी-अपनी गर्म रज़ाइयों में दुबककर सो गये। मैंने अपने कमरे का दरवाज़ा कुछ खुला छोड़ दिया, जिससे बन्नी की आहट मिलती रहे। थोड़ी देर में मुझे कू-कू की आवाज़ सुनाई दी। बन्नी साहब मेरे पलंग के पास आकर बैठे हुए थे। उन्हें देखकर हर्ष मिश्रित अचंभा हुआ कि यह पप किस तरह अपने को डोलची से मुक्त करके बाहर निकल आया है ? इसको तो अभी चलना भी नहीं आता, कैसे यह कोठरी से मेरे कमरे में आ गया। यह मेरे पास ही क्यों आया, यह अन्य परिवार के सदस्यों के कमरे में क्यों नहीं घुसा ? मैं मां की कोपभाजन न बनूं अतः बन्नी को मैंने अपने बिस्तरों पर आने की अनुमति न दी (जो अच्छी आदत है, पप को अकेले उसकी ही किसी बंद डोलची में बिस्तर बिछाकर सुलाना चाहिए।) केवल उसकी डोलची पलंग के पास ले आयी तथा उसे प्यार से थपथपाकर उसके गर्म बिस्तरों पर सुला दिया। अनुशासन का यह पहला कदम बन्नी ने स्वीकार लिया। उसका अपना बिस्तर है जो मेरे घर में आने के बाद उसकी मृत्यु तक उसकी शय्या रहा। अपनी गद्दी को वह भलीभांति पहचानता था। जब भी कोई उसे उठाता वह उचक-उचककर प्रतिवाद करता। कभी भी उसने दूसरों के बिस्तरों पर चढ़ने की हिम्मत नहीं की। वह जहां भी यात्रा करता, उसकी गद्दी मैं साथ ले जाती। मानो वह उसका सिंहासन थी। मालिक के अलावा कोई अन्य उसे जल्दी-जल्दी छू नहीं सकता था।

मैं बन्नी को लायी बड़े चाव से थी लेकिन उसका लालन-पालन घर के सभी सदस्य करते थे। विशेषकर मेरी मां उसके खाने-पीने का काम स्वयं पूरी सावधानी से करती और छोटी-मोटी बीमारियां लग जाने पर उसकी वैसे ही देखभाल करती जैसे उन्होंने अपनी आठ संतानों की की थी। शायद बीमारी में आने के कारण मां बन्नी के छोटे-मोटे कामों में उलझी रहती, वह हम सब लोगों को अच्छा लगता था। मां के डॉक्टर के अनुसार बन्नी उनकी नौवीं संतान था। बन्नी को सर्दी में दस्त लग जाने से उसने मां को काफ़ी परेशान किया। उन दिनों मैं भी किसी सरकारी काम से बंगलौर चली गयी थी। उसकी सफ़ाई, देख-रेख, दवादारू यहां तक कि रात को पलंग के पास सुलाने का कार्य सब अम्मा जी को ही करना पड़ा। मेरे वापस आते ही उन्होंने उसे डॉक्टर को दिखाकर उचित उपचार कराने की सलाह दी।

बन्नी तक़दीर के सिकंदर थे, मेरे पड़ौस में ही कुत्तों के एक डॉक्टर मेहमानी में आये हुए थे। उनके तात्कालिक इंजेक्शन, सलाइन ड्रॉप्स (बूंद-बूंद करके नसों में तरल पदार्थ डालना) आदि के उपचार के कारण वह बच गया, जो निस्संदेह मां के तात्कालिक उपचार, सेवा-सुश्रूषा एवं कर्तव्यनिष्ठा का फल था। अम्मा की देखभाल में पलने के कारण बन्नी हम लोगों के लिए केवल आमोद-विनोद के साधन बन गये। मैं रोज़ उसके लिए छोटी-सी रबड़ की गेंद लाती और उसे छत पर ले जाकर खिलाती। रेंग-रेंगकर चलने वाले बन्नी शीघ्र ही चौकड़ी मारने लगे थे और अपने पंजों और दांत में दबाकर गेंद फाड़कर रख देने लगे। जब गेंद फट जाती तो उसे सामने रख बन्नी को माफ़ी मंगवाने में हम लोगों को विशेष आनंद आता। वह कान नीचे किये दो पंजों के बल खड़ा होकर माफ़ी मांगता। इसी तरह पार्क में सुबह-शाम ले जाकर बन्नी को नित्यकर्म और दौड़कर गेंद लाने आदि का प्रशिक्षण दिया गया। जब वह बहुत छोटा था तो उसे केवल बेंच

पर बैठा दिया जाता था। पार्क में अन्य पालतू कुत्ते उसके पास आ सूंघकर चले जाते थे, लेकिन ढेर सारे बच्चे उसे घेरकर बैठ जाते और आतुरता से पूछते, "आंटी जी, यह कब चलेगा, कब अन्य कुत्तों की तरह भागेगा ?" कभी-कभी मनुष्य की तरह दो पैरों पर खड़ा होकर चलाना चाहते लेकिन बन्नी जब चारों पैरों पर बराबर चलने लगता तो उसे अधिक परिश्रम न करने देते। अपनी गोद में बैठाकर उसके रेशमी बालों को सहलाते। कान पकड़ते और 'हाथ मिलाओ बन्नी' कहकर खुद हाथ मिलाने लगते। बच्चों को यही लगता कि बन्नी ने चलना, भागना, गेंद को पकड़कर लाना आदि उनके सिखाने से ही सीख लिया है। कहते हैं कि छोटे पप को आप जितना प्यार देंगे, बड़ा होकर उतना अधिक प्यार वह घर वालों को देता है। बन्नी को प्यार घर वालों के अतिरिक्त पास-पड़ोस में अनेक बच्चों से मिलता था। शायद इसीलिए वह अम्मा जी के अलावा किसी अन्य की आज्ञा का पालन करना कतई पसंद नहीं करता था। समझता था अन्य लोग तो उसके साथ विनोद कर रहे हैं। अम्मा जी एक बार यदि उसे गद्दी पर बैठाकर कुछ गर्म कपड़ा ओढ़ा दें तो वह उसे नहीं उतारता था, लेकिन यदि हममें से कोई उसे ओढ़ाना चाहे तो वह तुरंत उतार देता और उसे खिलवाड़ समझ बैठता। बार-बार ढकना और निकलकर बाहर आने का क्रम बन जाता। खीजकर हम लोग कहते, "अम्मा जी के गद्दी पर बैठा देने पर ऐसे बैठ जाते हो जैसे हिज मास्टर वायस हो।" (गाने की रिकार्ड पर बैठे कुत्ते की शक्ल बनी होती है) हमारी डपट का उस पर कोई असर न था।

एक बार मेरी भतीजी रीतू (अंतरा और अमन की मां) ने बन्नी को लेकर काफ़ी कोशिश की कि वह उसकी आज्ञानुसार व्यवहार करे। कुत्तों को ऐसा प्रशिक्षण बहुधा दिया जाता है। बन्नी तीन-चार महीने के पप थे, लेकिन नटखट खिलाड़ी होने के कारण

बन्नी ने रीतू को जल्दी हैरान कर दिया। वह लगातार सिट अप बन्नी (बैठ जाओ बन्नी) का आदेश देती और बन्नी अपनी भोली-भाली सूरत के साथ उसके हैंड शैक (हाथ मिलाने) करते या कान नीचा करके माफी मांगते या भागकर गेंद ले आते लेकिन बैठकर आज्ञा का पालन न करते। शायद बन्नी की जाति के कुत्ते इस तरह का प्रशिक्षण अपने बाल स्वभाव के कारण लेने में असमर्थ हैं। अन्य आदतों को डालने में बन्नी को अधिक प्रशिक्षण की ज़रूरत नहीं पड़ी जैसे कहां शौचालय के लिए जाना है। कैसे नहाना-धोना, खाना-पीना, कहां अंदर नहीं जाना है आदि। मालिक को इन आदतों को सिखलाने के लिए इनाम और दंड का प्रतिफल प्रयोग में लाना पड़ता है और अच्छी जाति का कुत्ता उन्हें जल्दी ही सीख लेता है जैसे—शुरू में एक अखबार का कागज़ बिछाकर (जो सदा एक नियमित स्थान पर जैसे शौचालय के पास) रख दिया गया और बन्नी को सुंघाकर बतला दिया गया था कि वह वहीं पर पेशाब करे। जितनी बार वह अखबार पर सू-सू करता उसे इनाम के तौर पर खाने की चीज़ या बाद में थपथपाकर विशेष प्रेम दर्शित किया जाता, लेकिन यदि वह अखबार से बाहर पेशाब करता तो दंडित किया जाता। उसे घसीटकर अखबार के पास लाया जाता, उसकी नाक को अखबार पर रगड़ा जाता और एक धीमी चपत लगायी जाती। कभी भी कुत्ते के सिर पर चोट नहीं लगानी चाहिए, पीछे के भाग पर मारने में कुत्ता आपत्ति नहीं करता। इसी तरह दांतों से कुतरना कुत्ते को बेहद पसंद होता है। बन्नी जब पप थे तो हमारे यहां चप्पल, मोज़े आदि अक्सर वह काटकर रख देते थे, उसके लिए एक डॉगबोन (कुत्ते की कृत्रिम हड्डी) लाकर रख दी गयी थी लेकिन किसी अन्य चीज़ों को कुतर देने के लिए उन्हें दंडित किया जाता।

कुत्ते में सहज प्रवृत्ति हड्डी को खोजकर चूसने की होती है,

क्योंकि बन्नी को निरामिष भोजन मिलता था अतः बाहर जाकर ऐसी चीज़ों को ढूंढ़कर खाना या चाव से लेकर घर आना स्वाभाविक था, लेकिन इनाम और दंड का प्रतिफल देकर इस प्राकृतिक गुण से बन्नी को काफ़ी मुक्त कराया गया। वह बाहर से जब भी लौटते, उन्हें हाथ-पैर धोकर ही घर के अंदर घूमने की छूट दी जाती। इसके अतिरिक्त यदि वह किसी हड्डी आदि के पीछे-पीछे दौड़ते तो उन्हें प्रताड़ित किया जाता। हड्डी चूसने के लिए उन्हें हमारे पड़ोसी, जो सामिष भोजन बनाते थे, उनके घर जाकर ही मिलती। वह भी यदाकदा। इसके साथ-साथ गाजर, मूली, सेब आदि ऐसी सब्ज़ी या फल कुतरने के लिए उन्हें रोज़ मिलते थे। वह मूंगफली हमेशा छीलकर खाता, संतरा, मुसम्मी आदि फल को अच्छी तरह पंजों में फंसाकर रेशे निकालकर खाता। हो सकता है इन सब बातों का अच्छा प्रभाव पड़ा हो। जब भी कोई गंदी चीज़ वह लेकर आते या उनके दांतों आदि में फंसी दिखाई पड़ती तो मालिक उन्हें दंडित करके तुरंत साफ़ करता। बन्नी भली-भांति जान गये थे ऐसी चीज़ें लाने के लिए उन्हें अवश्य माफ़ी मांगनी पड़ेगी। वह ऐसा अपराध आदि करने पर सहर्ष दंडित हो जाते थे। उसमें न्यायोचित दंड के लिए पता नहीं कैसे अत्यधिक अपराध-बोध था, लेकिन यदि ग़लती न करते तब भी दंडित किया जाता तो वह बगावत कर बैठते। यह बात समझना कठिन था कि वे कैसे समझ लेते थे कि दंड न्यायोचित है कि नहीं अथवा वह दंड कौन दे रहा है? उनमें तर्क-शक्ति, जानवर होने के कारण, विकसित होने का प्रश्न ही नहीं उठता। कैसे बच्चों के धमकाने में या लाख जतन करने पर भी वह माफ़ी नहीं मांग सकते थे और मालिक के अनजाने में दंडित कर देने पर गुस्से में उसे काट भी सकते थे? एक बार जाड़े के दिनों में कपड़े सुखाने मैं छत पर गयी हुई थी, बन्नी भी पीछे-पीछे मेरे साथ आये। क्योंकि उनका नित्य-प्रति का अभ्यास था कि वे परिवार

के सदस्यों के साथ छत पर कपड़े सुखाने अवश्य जाते थे, यही कार्य यदि कोई नौकर करे तो यदाकदा ही छत पर जाते थे। कपड़े सुखाते समय मेरा ध्यान छत पर पड़ी गंदगी की ओर चला गया। मुझे लगा ज़रूर यह गंदा काम बन्नी का है। अतः मैंने आव देखा न ताव, बन्नी को दंडित करके माफ़ी मांगने का आदेश दिया। मार तो उसने चुपचाप खा ली लेकिन माफ़ी नहीं मांगी। मुझे क्रोध आ गया, मैंने उसे पकड़कर गंदगी की ओर ले जाकर सुंघाना चाहा कि एकाएक बन्नी को भी क्रोध आ गया और उसने मेरी गीली अंगुलियों को अपने दांतों के बीच में रखकर दबा दिया। एक चीख निकालते ही बन्नी ने मेरा हाथ छोड़ दिया और लगे मुझे बेहद प्यार से सहलाने, मानो सिर से पैर तक की नसों में व्याप्त मेरी पीड़ा को वह पी जायेगा। थोड़ा-सा खून अंगुलियों पर छलक आया था, उसे वह तुरंत चाट गये और माफ़ी की मुद्रा बनाये बार-बार क्षमा-याचना करने लगे। क्या उनकी क्षमा-याचना से कुत्ते के काटे का उपचार हो सकता था ?

मैंने तुरंत डिटॉल से अंगुलियों को धोया और पट्टी बांधकर बन्नी के डॉक्टर के पास पहुंची। उनके अनुसार मैंने उचित उपचार कर लिया था। कुत्ता पालतू है और इसे इंजेक्शन आदि पहले ही मिल चुके हैं, जिसके कारण ऐसे कुत्ते के दांत लग जाने से ज़हर हो जाने का भय नहीं है। पामेरेरियन जाति के कुत्ते गुस्सा आ जाने पर अपने मालिक तक को स्नब (झिड़क देना) कर देते हैं। मालिक को भी उन्हें बच्चों की तरह दुलारकर समझाना-बुझाना चाहिए। निस्संदेह मुझसे अपराध हो गया था। बिना जाने-बूझे बन्नी को मार बैठी। इस बात की जानकारी करना अति आवश्यक हो गया कि छत पर गंदगी किसने की ? अगर बन्नी ने की होती तो वह इतनी बगावत न करता। मेरी अंगुली में पट्टी बंधी देख वह बार-बार मेरे पास आता और अपना मुंह रगड़-रगड़कर मुझे इस बात का अहसास दिलाता कि उसे काट लेने

का बेहद दु:ख या अफसोस है। नौकरों में इस बात की चर्चा हो गयी कि बहन जी को बन्नी ने काट लिया है, वे सभी आश्चर्यचकित थे कि बन्नी ने कैसे काट लिया, वह तो किसी को नहीं काटता, फिर अपने मालिक को क्यों काटा ?

पूरे दिन मुझे शारीरिक कष्ट से अधिक मानसिक वेदना थी कि बन्नी ने काटना शुरू कर दिया। आज मुझे गुस्से में काटा, कल किसी अन्य को गुर्राकर काट सकता है। एक तो ऊपर गंदगी की दूसरे काट लिया। मेरे मनोभावों को बन्नी समझ गया। वह भी चुप-चुप मेरे पास बैठा रहा, कुछ खाया-पिया नहीं। दोपहर के बाद जानकी किसी काम से मेरे पास आयी। बन्नी ने उठकर सदा की तरह हुलसकर स्वागत नहीं किया। चुपचाप एक कोने में दुबका रहा और कान खड़े करके हम लोगों के वार्तालाप को समझने की कोशिश में रहा। बन्नी का खाना तो अक्सर ही पड़ा रहता था लेकिन वह इतना अधिक उदास कभी नहीं होते देखा गया था। अत: जानकी का मातृत्व से भरा हृदय पसीज़ उठा, "माफ़ कीजिए बहन जी, मुझे सुबह ही सच-सच बता देना चाहिए था। ऊपर छत पर गंदा मेरे छोटे बेटे ने किया था। उसे यह गंदी आदत पड़ गयी है। नीचे आता नहीं, छत पर बैठ जाता है। हम पानी डालकर बहा देते हैं, आज आपने जाकर देख लिया, बड़ी भूल हो गयी। बन्नी का कसूर नहीं था, इसलिए इसने आपको काट लिया। जानवर है तो क्या, उसे बिना कसूर कौन मार सकता है।"

जानकी की बातें सुनकर मुझे आत्मिक संतोष हुआ। वास्तव में बन्नी बुद्धिमान ही नहीं, बड़ी आन-बान वाले हैं। मैंने बन्नी-बन्नी कहकर तुरंत अपने पास बुलाया, लेकिन वह टस से मस नहीं हुए। मुझे ही पास जाकर उन्हें गोद में बिठाकर दुलारना पड़ा। स्नेह पाकर वह खाने-पीने लगा। अत: मेरी शारीरिक पीड़ा दोनों को एक अच्छी शिक्षा देकर गयी। भावनाओं से कर्तव्य ऊंचा होता है। कर्तव्य से भी ऊंचा

होता है विश्वास। मुझे बन्नी पर विश्वास अटूट हो गया कि वह मर्यादा को नहीं तोड़ेगा। जो भी आदतें बचपन में डाली गयी थीं वह उन सबका पालन करता, जैसे—नियमित रूप से मालिक के साथ घूमने जाना-आना, घर आकर हाथ-पैर धुलवाना, चौके में नहीं जाना, परिवार के सदस्यों को प्यार करना, घर की चौकीदारी करना। पूजा करते समय चुपचाप शांत बैठना, आरती लेना, टीका लगवाना आदि-आदि।

चौकीदारी करना तो कुत्तों का स्वाभाविक गुण है लेकिन बन्नी की जाति के कुत्ते अच्छे चौकीदार नहीं होते, मैंने यह सुना हुआ था। कोई भी उन्हें प्यार से दुलारकर अपने काबू में कर सकता है। खिला-पिलाकर कुत्ते को काबू में आसानी से किया जाता है इसीलिए खाने में ज़हर आदि देकर कुत्ते को मार भी डाला जाता है। एक दिन मैं किसी कार्य से पड़ोस में गयी हुई थी, घर पर केवल बन्नी और मेरी छोटी बहन थी। मेरी अनुपस्थिति में बिजली वाला काम करने आया। उसे काम समझाकर मेरी बहन मुझे बुलाने के लिए पड़ोस में जाने लगी। साधारण परिस्थिति में बन्नी कूदते हुए मुझे बुलाने बहन के साथ पड़ोसी के घर आ जाते लेकिन बिजली वाले के सहारे खुला घर छोड़ना बन्नी को मंजूर न हुआ। वह कुछ देर तो बहन का मुंह ताकते रहे मानो पूछ रहे हों, घर खुला छोड़कर कैसे जा रही हो, एक अनजान आदमी भीतर है? बहन उनके मूक प्रश्न को कैसे समझ पाती! वह उसे सीढ़ियों पर छोड़कर मुझे बुलाने आ गयी। लेकिन बन्नी घर में वापस आकर बिजली वाले की चौकीदारी करने में व्यस्त रहे। हम लोग सदैव बन्नी का मान घर के मालिक की तरह करते थे। उन्हें विशेष चिंता रहती थी कि कौन आया, कौन गया, परिवार का कौन सदस्य अभी भी नहीं लौटा है? वह अक्सर नाक लगाये दरवाजे के पास बैठे हुए इंतज़ार करते रहते, यदि किसी ने आने में विलंब कर

दिया हो तब आने पर बड़ी आतुरता से उसका स्वागत करते। घर का कोई सदस्य रात होने पर सोने न जाये तब उसका साथ देना बन्नी का परम कर्तव्य होता था। मैं अक्सर पढ़ाई-लिखाई का कार्य रात में करती रहती थी। बन्नी मेरे पैरों के पास बैठकर बड़े धैर्य से उस कार्य को पूरा करवाने में अपना सान्निध्य देते लेकिन मालिक को अत्यधिक शारीरिक कष्ट न हो जाये, इसके प्रति भी पूरी सावधानी बरतते। मालिक को सचेत करने के लिए वह किताब पर अपना सिर रख देते या मालिक के पैरों को सहलाने लगते या कुनमुनाकर मुझे सोने का कार्यक्रम बनाने के लिए विवश कर देते। यदि मालिक या परिवार का कोई अन्य सदस्य बीमार हो जाता तो वह उसकी पूरी देखभाल करते। रोगी की शय्या के नीचे चौकीदारी करना मानो केवल उनका एकाधिकार था। इसी आदत के कारण उन्हें अम्मा की झिड़कियां मिला करती थीं क्योंकि उनके बाल अक्सर मां के पान की डोलची तक पहुंच जाते या पलंग के नीचे की ज़मीन की झाड़ू लगाने पर मिलते। शुरू से ही मां ने चाहा था कि यह कुत्ता बाहर बैठे। मेरी अनुपस्थिति में लेकिन बन्नी को पप के रूप में उन्होंने अपने पलंग के पास सोने की अनुमति दे दी थी और उसकी काफ़ी सेवा की थी। पप को जैसा प्रेम दोगे वैसा ही बड़े होकर घर वालों को देता है, यह कहावत बन्नी ने चरितार्थ कर दिखलायी।

बच्चे शुरू से ही बन्नी को तेज़ भगाने की कोशिश में रहते थे, बड़े होकर बन्नी अपनी भाग-दौड़ से बच्चों का काफ़ी मनोरंजन करते रहते थे। इसी चक्कर में एक बार बन्नी को काफ़ी चोट भी आयी। वह मोटरसाइकिल के पीछे दौड़कर उसके आगे निकलने का काम मना करने पर भी करना न चूकते थे। तेज़ गति का वाहन उन्हें मानो चुनौती दे देता था। वे बेतहाशा मोटरसाइकिल के पीछे भाग रहे थे, शायद चालक को लगा कि कुत्ता उनको काटने के लिए पीछे-पीछे आ

रहा है। जैसे ही बन्नी मोटरसाइकिल के पास पहुंचने वाले थे कि चालक ने ब्रेक लगा दी और बन्नी के पिछले पैर में चोटें आ गयीं। यह चोट काफ़ी पीड़ादायक रही। कभी-कभी बन्नी कुछ लंगड़ाकर चलने लगे और वृद्धावस्था में इसी शारीरिक कष्ट के कारण उन्होंने दौड़ना-भागना कम कर दिया, जिससे उनका शरीर स्थूलकाय हो गया। यह चोट बन्नी को हिरन की तरह तेज़ गति से भागते समय परेशान नहीं करती थी इसीलिए बच्चे 'लंगडूदीन बजाये बीन' कहकर उसका मज़ाक़ नहीं बनाते थे। मालिक अवश्य जानता था कि इसके पैरों की हड्डी बेहद पतली और नरम होने के कारण चोट लगने के बाद नार्मल (पूर्ववत्) नहीं हो पायी है। उसका उपचार प्लास्टर लगवाकर यदि समय पर किया गया होता तो अवश्य दौड़ने-भागने में इतना अधिक दर्द न होता कि उसे गर्म पानी में नमक आदि डालकर सेकना पड़ता। हम लोग आॅयोडेक्स लगाकर हल्की मालिश भी कर देते थे, लेकिन यह पीड़ा उसे दौड़ने में कम, चलने में अधिक होती जान पड़ती थी। इसीलिए मज़ाक़ में परिवार के लोग बन्नी को मेलिंग्नर कह देते थे। वैसे भी छोटी-मोटी बीमारी में दवादारू मिलते रहने के कारण वह अन्य कुत्तों की तरह अपना उपचार स्वयं नहीं कर लेते थे, बीमार होने पर बेहद सुस्त हो जाते। खाना-पीना छोड़ देते, जैसे प्राण-पखेरू उड़ रहे हों। मालिक को गोद में लिटाकर तुरंत उपचार करना होता था। मालिक घर में नहीं हो तो भी उनकी देखभाल के लिए परिवार के अन्य जन यह कार्यभार लेते थे। भाग्यशाली इतने अधिक थे कि पड़ोसी तक उनकी मदद के लिए दौड़ पड़ते थे।

मां की बीमारी में मुझे बन्नी को छोड़कर अक्सर ही लखनऊ जाना पड़ता था। उसका व्यवहार नौकरों के साथ, पड़ोसी मित्रों के साथ इतना बदला हुआ होता था कि सबके सब आश्चर्यचकित हो जाते थे कि यह कुत्ता इतना अधिक एडजस्टमेंट (समायोजन) कैसे

कर लेता है। एक बार कई दिनों तक यह मेरे दक्षिण भारतीय मित्र डॉ० मुरुग्गेशन के पास अतिथि रहे। वहां खान-पान में बिलकुल फ़र्क था लेकिन बन्नी ने उनको बिलकुल परेशान नहीं किया जबकि लखनऊ में मेरे नज़दीकी रिश्तेदारों ने इनके नखरों के कारण तौबा बोल ली थी। क्योंकि बन्नी का व्यवहार आपत्ति समय में अत्यधिक मनमोहक होता था। मेरे मित्र का कहना था कि बन्नी तो काफ़ी शैतान लड़का के माफ़िक है, जानता है किसके साथ कैसा रहना है। निस्संदेह डॉ० मुरुग्गेशन का यह विश्लेषण शत-प्रतिशत सही था। उनके लड़के भारती एवं लड़की भावनी बन्नी को बाल्यकाल से ही जानते थे। अतः उस अतिथि काल में बन्नी की इन दोनों के साथ फ़ोटो भी खींची गयी।

इसी तरह डॉ० बलाया के घर जाकर मीठे बिस्कुट खाना और फ्रिज का ठंडा पानी पीना बन्नी का शाम का काफ़ी दिनों तक प्रोग्राम-सा बन गया। डॉ० बलाया वैसे भी काफ़ी कुत्तों से प्रेम करती थीं। उनके पास कुत्तों की विशेष जानकारी रहती थी, क्योंकि डॉक्टर होने के अलावा कुत्तों के सहवास में उनके अनुभव अत्यंत रोचक थे। एक बार मेरी अनुपस्थिति में बन्नी बेहद बीमार हुए लेकिन डॉ० बलाया के निर्देशन में वह कैसे मर सकते थे? दवा के अलावा प्रेमपूर्वक देखभाल इन छोटे कद वाले पामेरियन कुत्तों के लिए अति आवश्यक है। मालिक की अनुपस्थिति में ये खाना-पीना छोड़ देते हैं और उदास-से रहने लगते हैं। इनकी विरह-व्यथा वास्तव में अकथनीय है। उस पर यदि उन्हें कोई संक्रामक रोग लग जाये तो बचना असंभव-सा हो जाता है।

डॉ० बलाया के घर में कुतिया थी, जिसे वह प्यार से 'पुत्री सोनी' कहती थी, जिसे आंख खुलते ही से पाला-पोसा था। वह यूरोपियन स्पिटज जाति की हल्के भूरे रंग की कुतिया थी। डॉ०

बलाया अपनी सोनी को गोद में लेकर चलती थी और उसके विषय में इतने रोचक ढंग से बतलाती थी कि मानो वह किसी नन्हीं-सी बिटिया की बातें कर रही हो। बन्नी जब भी डॉ० बलाया के यहां जाते, सोनी उन्हें डपटकर दूर करना चाहती, इसीलिए उसकी उपस्थिति में वह बन्नी को गोद में नहीं बिठाती। लेकिन 'बन्नी बाबा' कहकर उसका अभिवादन करती और खिलाती-पिलाती। मेरे कई मित्र डॉ० बलाया का कुत्तों के प्रति झुकाव देखकर मुझे सचेत करते रहते थे कि कुत्तों को इतना सिर पर चढ़ाना ठीक नहीं होता। मेरी एक प्रिय सखी ऊषा जी का लगाव कुत्तों से नाम मात्र न था लेकिन बन्नी को रखने में उन्होंने भी संकोच नहीं किया। जब बन्नी खो गये थे उस समय ऊषा जी ने उसे रेलवे कर्मचारियों द्वारा ढुंढ़वाने में रेलवे बोर्ड के अध्यक्ष तक पहल की और अपने वफादार नौकरों को रामनगर जाकर खोज-खबर लाने भेजा। शायद उनका झुकाव लव मी लव माई डॉग (मुझे प्यार करते हो तो मेरे कुत्ते को पहले प्यार करो) रहा होगा, किंतु बन्नी के अच्छे शिष्टाचार की वह भी प्रशंसक रही। इसी तरह वह मेरी घनिष्ठ मित्र शांति के आने पर अत्यधिक आनंदित होता। उसकी बिटिया अंजू कुत्तों से बेहद डरती थी लेकिन मां का बन्नी के प्रति स्नेह देख वह अपने डर को निराधार समझने लगी थी। अंजू सब कुछ समझकर भी कुत्ते के डर से मुक्त न हो पायी। इसका कारण निःसंदेह उसके अचेतन मन में बैठा हुआ भयंकर बाल्यकाल का कोई प्रसंग रहा होगा, जो कुत्ता देखते ही उसमें भय का संचार पैदा कर देता था। वह अपनी मां की तरह बन्नी को प्यार से दुलारना चाहती थी, लेकिन बालों को छूना तो बहुत बड़ी बात है, कुत्ते के पास आने मात्र से उसके रोंगटे खड़े हो जाते।

अंजू ने बन्नी को बाल्यकाल से ही देखा था। उसे उसके बारे में जानने की उत्सुकता अवश्य रहती क्योंकि मां के अतिरिक्त उसकी

अन्य बहनें बन्नी के साथ बड़े चाव से खेलती थीं। अंजू की जिज्ञासा शांत करने के लिए मैंने बन्नी की आदतें विस्तार से बतलायीं। उसे भी बन्नी की शख़्सियत के बारे में जानकर हैरानी थी कि यह कुत्ता शाकाहारी है। किसी को काटता नहीं, इसका मालिक दोनों समय इसके बालों को ब्रश से झाड़ता है उसमें टिक (जू) को निकालकर एक बंद शीशे में दवा डालकर बंद कर देता है जिससे टिक अंडे न दे सकें। कुत्तों को पालतू रखने के लिए नियमित रूप से इंजेक्शन दिये जाते हैं जिससे यदि कुत्ता काट ले तो भी ज़हर फैलने का डर नहीं रहता। इसके अलावा बच्चों की तरह उन्हें नहलाना, खिलाना-पिलाना और उनके पेट में कीड़े न हो जायें, इसके लिए डीवारमिंग (पेट के कीड़े निकालने की क्रिया) करना ज़रूरी होता है। जैसे कुत्ते को बचपन से रखा जायेगा वह बड़ा होकर वैसा ही व्यवहार सीख लेगा, इसी के कारण ये सब बन्नी करना पसंद करता है। ये सुनकर अंजू हंसकर कहती, "शायद मैंने भी बचपन से कुत्तों से डरना सीख लिया है। इसीलिए मैं चाहकर भी बन्नी को हाथ से छू सकने में असमर्थ हूं।"

"लेकिन तुम चाहो तो तुम्हारा डर निकाला जा सकता है, उसके लिए तुम्हारी आदतों का अध्ययन करना होगा। और मनोवैज्ञानिक उपचार द्वारा तुम इस आदत से छुटकारा पा सकती हो।" मैंने प्रतिवाद किया।

"आपने सुना होगा कि बूढ़ा तोता राम-राम नहीं बोलता, अब मेरी आदत छूटने से रही। मुझे पता है डरना नहीं चाहिए लेकिन क्या करूं।"

"निःसहाय होने की क्या ज़रूरत है? यह उपचार मनोवैज्ञानिक सरकारी अस्पतालों में निःशुल्क करते हैं।" मैंने बतलाया।

"देखा जायेगा, अभी पढ़ाई में अधिक समय व्यस्त रहती हूं।

इन सब बातों के लिए ढेर-सा टाइम होना चाहिए।"

"संकल्प करोगी तो कभी-न-कभी अवश्य समय मिल जायेगा, तुम तो इसे अपनी जन्मजात कमजोरी मानकर अपना स्वभाव जैसा समझ बैठी हो।" अंजू का मनोबल दृढ़ करने के लिए मैंने कहा।

जन्मजात संस्कारों की बात चली है तो यह बतलाना अति आवश्यक है कि बन्नी साहब आम कुत्तों की तरह कुतियों के पीछे-पीछे भागते नहीं रहते थे। उनकी तो अपनी आन-बान-शान थी, जिससे आकर्षित हो अच्छी-अच्छी जाति की कुतियों के मालिक मिलन क्रास करवाने के लिए मेरे पास निमंत्रण पत्र भेजते। हमारे पड़ोस में एक जानी-मानी समाजसेविका मिसेज गुप्ता को अपनी सुंदर-सी पॉमेरियन कुतिया के लिए बन्नी बहुत पसंद आये। उन्होंने दोनों को क्रॉस (मैथुन) करवाने की गुप्त योजनाएं बनायीं। मुझसे भी परामर्श लिया। बन्नी कभी भी अकेले बाहर नहीं जाते थे अतः उन्होंने आग्रह किया कि बन्नी को उनके घर छोड़ दिया जाये क्योंकि उनकी कुतिया भी बेहद शर्मीली स्वभाव की थी इसलिए मिलन होना असंभव-सा था। उनके आग्रह पर मैं बन्नी को उनके घर ले गयी, लेकिन बन्नी वहां किसी भी हालत में रहने को तैयार न हुए। बन्नी की हठ देखकर उनका पुत्र सौरभ (जो किशोर आयु का था) बोला, "इन दोनों की डेटिंग करवाकर धूमधाम से शादी हो, ऐसे कैसे दोनों का मिलन संभव है ?"

"भाई, कुत्तों की भी कहीं शादी होती है ?" हंसकर मैंने पूछा।

"मेरा मतलब शादी यानि यह एक-दूसरे के गले में माला डालें, केक वगैरा खायें" सौरभ ने सहज भाव से युक्ति बतलायी। लेकिन मुझे पता था यह मिलन संभव तभी होगा जब उनकी कुतिया हीट में

(रजस्वला हो) और बन्नी का आकर्षण प्राकृतिक हो। मुझे पता था बन्नी किसी भी कुत्ता-कुतिया को जल्दी-जल्दी घास नहीं डालते। कुछ एक अपवादों के अतिरिक्त जैसे स्नोई नामक एक कुत्ता उनका परम मित्र था। वह उनकी ही जाति का था लेकिन बन्नी से क़द में लंबा और स्वभाव में बेहद उच्छृंखल। स्नोई का मालिक सदैव चेन करके स्नोई को रखता था क्योंकि यह कुत्ता खोलते ही बाहर निकल जाता और घंटों अकेला घूमता रहता उसे पकड़कर लाना बहुत मुश्किल काम होता। सुबह-शाम बन्नी को घुमाते समय इन दोनों कुत्तों की भेंट होती। बन्नी साहब चेन न होने के कारण स्नोई के पास जाकर सूंघते उसके ऊपर चढ़ते और उसे खिलवाड़ करने के लिए प्रेरित करते। स्नोई का मालिक चेन से बांधकर रखना पसंद नहीं करता था लेकिन चेन छोड़ते ही स्नोई के भाग जाने के भय से उसकी यही कोशिश होती कि बन्नी साथ-साथ चलता रहे और उनके कुत्ते का भी मनोरंजन होता रहे। मुझे भी स्नोई पर दया आती क्योंकि वह बेचारा केवल घर की चारदीवारी में स्वछंद हो पाता था शायद इसीलिए वह इतना अधिक स्वतंत्र होने के लिए उतावला रहता था।

एक दिन स्नोई के मालिक मेरे घर आये। स्नोई भी चेन करके उनके साथ खड़े हुए थे। जैसे ही मैंने दरवाज़ा खोला, बन्नी बाहर निकलकर गुर्राये और चेन लिये हुए स्नोई पर टूट पड़े। हम दोनों आश्चर्यचकित थे क्योंकि बाहर इन दोनों में घनिष्ठ मित्रता थी लेकिन घर आ जाने पर बन्नी जानी दुश्मन हो उठे, जो कि कुत्ते का प्राकृतिक स्वभाव था। एक कुत्ता अपने भू-क्षेत्र में दूसरे कुत्ते को नहीं आने देता, इसीलिए बन्नी बेहद नाराज़ थे कि स्नोई की हिम्मत कैसे हुई कि वह उसके घर आ जाये ? लेकिन यही बन्नी स्नोई के घर अक्सर जाते-आते थे, उस समय बन्नी की गति अबाध होती। डोर (दरवाज़ा) से घुसकर वह स्नोई को बाहर आने का मानो न्यौता दे

रहे हों। लालायित स्नोई बन्नी को गुर्राकर निकल जाने को बाध्य न करता। चेन से बंधा होने के कारण बन्नी का इस तरह आना-जाना उसके लिए मनोरंजन का साधन बन जाता होगा।

स्नोई का मालिक इस अपमान को सहन न कर सका, उसने धीरे से बन्नी के पीछे लात मारते हुए कहा, "ये भी खूब रही। बाहर तो तू स्नोई के साथ ऐसे गले लगता है जैसा तेरा अपना कोई हो, यहां पर ये तेरा दुश्मन हो गया है। उसके घर तो तू खूब मौज़मस्ती के साथ घूमता-फिरता है, आना मेरे घर।" मुझे उनका यह क्रूर व्यवहार बिलकुल अच्छा न लगा। क्या कुत्ते को लात मारकर भगा देना मनुष्य के स्वामित्व का अधिकार है ? मेरे लिए अभद्र मेहमान का स्वागत करना संभव न था। हम दोनों ने बातचीत बाहर खड़े होकर जल्दी समाप्त की।

स्नोई के मालिक का गुस्सा जल्दी ही शांत हो गया, जिसका कारण जेनी नामक कुतिया का एकाएक मेरे घर आगमन था। मेरे पास के एक रिश्तेदार को बन्नी बेहद पसंद थे। अतः दोनों का मिलन करवाने के लिए वह अपनी बेहद सुंदर तेज दौड़ने वाली फुर्तीली सफ़ेद रंग की पॉमेरियन कुतिया को छोड़ गया। जेनी हमारे यहां बतौर मेहमान छः महीने तक रही, लेकिन बन्नी और जेनी में जो पहले दिन समझौता हुआ था वह गत छः महीने वैसा ही बना रहा और हम लोगों की पप की लालसा अधूरी रही। स्नोई के मालिक की निगाहें जेनी पर जमी होने के कारण बन्नी को वह विशेष प्रेम से बुलाने लगे। उन्हें पता था बन्नी तो ब्रह्मचारी है लेकिन बन्नी और जेनी साथ-साथ आते-जाते रहते तो शायद स्नोई और जेनी का मिलन हो जाये। बन्नी और जेनी का मिलन हो या न हो किंतु बन्नी जेनी पर अपना आधिपत्य नहीं छोड़ते थे, मज़ाल है कोई अन्य कुत्ता जेनी के पास फटक भी जाये।

जेनी वास्तव में अपने शालीन शिष्टाचार में भूरि-भूरि प्रशंसा की पात्र थी। पहले दिन से ही उसने स्वीकार लिया था कि यह घर बन्नी का है और उसका अस्तित्व केवल मात्र एक प्रिय अतिथि का है। मालिक द्वारा छोड़े जाने पर दूसरे दिन जेनी ने भाग जाने का दुस्साहस किया। वह कूदकर बालकनी के नीचे वाली दीवार पर आ गयी, लेकिन उसके नीचे कूदना संभव न था। मैंने जेनी को बड़े प्रेमपूर्वक समझाया-बुझाया। मालिक तो उसका सैकड़ों मील दूर था। वहां तक पहुंचना असंभव होगा। उसके खाने-पीने का प्रबंध अच्छे-से-अच्छा किया गया और एक-दो दिन में ही वह हम लोगों से इतना अधिक हिल-मिल गयी मानो वह इसी परिवेश में पाली-पोसी गयी थी। उसके व्यवहार से मुग्ध होने के कारण हम लोग उसे प्यार से 'लेडी जेनी' कहने लगे।

बन्नी खाने-पीने के मामले में जेनी के अपना हिस्सा भी खा जाने पर आपत्ति नहीं करते, लेकिन यदि वह मेरा स्वागत करने के लिए बन्नी के साथ भागकर आती तो बन्नी गुर्राकर उसे दूर कर देते। बेचारी पीछे से आकर मेरे पैर की पिंडली को कुरेदकर मेरा ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती। सामने से बन्नी पीछे से जेनी दोनों एकसाथ मुझसे प्यार लेते जो प्रिय जेनी की सूझबूझ के कारण संभव हो पाया। बन्नी को तो जेनी का मेरे बगल में बैठना भी गवारा न था। इसीलिए जेनी ने मेरे सामने वाली कोच पर बैठना शुरू कर दिया। वहां से बैठकर वह मुझे प्यार से ताकती रहती। बन्नी मेरी बगल वाली कुर्सी पर बैठते या पैरों के आसपास बैठने के आदी थे। उन्हें हाथ मिलाना, अपने बालों को सहलाना आदि अति प्रिय थे। जेनी को भी यह सब अच्छा लगता होगा। वह भी अपने घर में दुलार से पाली-पोसी गयी थी लेकिन यहां पर वह बन्नी से प्रतिस्पर्धा में कुछ ऐसा नहीं मांग पड़ती, जिससे दोनों झगड़ पड़ें। लेडी जेनी का इतना

शालीन व्यवहार निःसंदेह उसकी चतुराई का द्योतक था।

लेडी जेनी अत्यंत कमनीय नाक-नक्शे वाली शुद्ध पॉमेरियन ब्रीड (जाति) की कुतिया थी। साहस और दूरदर्शिता में वह बन्नी को सहज परास्त कर सकती थी, लेकिन बन्नी के पुरुषत्व के स्वाभिमान पर उसने कभी चोट नहीं पहुंचायी जबकि आस-पड़ोस के सभी कुत्ते-कुतियों को उसने पछाड़कर उनपर अपनी धाक जमा ली थी। अपने से बड़े आकार वाले कुत्ते को वह थोड़ा-सा चूमकर पीछे कर देती और लंबी-लंबी छलांग-मारकर हिरणी-सी भाग जाती। देसी कुत्ते भी उसे तंग नहीं कर सकते थे।

बड़े-बड़ों को वह क्षण मात्र में वश में कर लेती थी या खदेड़कर विजयिनी की तरह घर लौट आती। हमारे पड़ोस में एक नहीं अनेक जाति के कुत्ते-कुतिया थीं क्योंकि कुत्तों की विश्व में जातियां लगभग दो सौ प्रकार की होंगी। ब्राउनी नामक कुतिया जो आकार में स्पेनिल और अलसेशियन का मिश्रित रूप लगती थी, वह काफ़ी गुस्सैल और नकचढ़ी होने के कारण सबसे दूर रहती थी। केवल अपने मालिक और परिवार के सदस्य को ही पास आने देती थी। वह और लेडी जेनी जब भी मिलते ब्राउनी भौं-भौं करके अपने घर में घुस जाती और जेनी उसे निर्विकार देखती रहती। एक दिन सड़क पर लेडी जेनी और ब्राउनी का आमना-सामना हो गया। जेनी ने दौड़कर ब्राउनी को रपटाया, ब्राउनी ने अपने घर की झाड़ियों में छिप जाना उचित समझा। लेकिन जेनी ने वहां भी उसका पीछा नहीं छोड़ा और उसे घर के अंदर पहुंचाकर दम लिया। इसके बाद ब्राउनी जेनी से डरने लगी। उसे देखते ही घर में घुस जाती।

बन्नी की भांति जेनी भी शाकाहारी भोजन खाने की आदी थी। अतः वह कभी भी कोई हड्डी या अन्य गंदगी लेकर नहीं आयी। सफ़ाईपसंद वह बन्नी से अधिक थी। ठंडे पानी से नहाना उसे

बेहद पसंद था। नल के नीचे खड़ाकर देने पर वह बड़े रोचक ढंग से स्वयं नहा लेती थी। बन्नी को तो थोड़ी भी सर्दी पड़ने पर गर्म पानी से नहलाया जाता था। बन्नी के बाल काफी बड़े थे इसीलिए डॉग सोप को लगाते वक्त गर्म पानी की आवश्यकता पड़ जाती थी और बालों को सूखने के लिए पर्याप्त धूप की। इन सबकी आवश्यकता जेनी को नहीं होती थी। बालों को ब्रश करने और टिक (जूं) आदि निकालने में बन्नी के साथ काफी समय लगाना पड़ता था। बाहर घुमाते समय लेडी जेनी की निर्भीक फुर्तीली चाल अत्यंत मनमोहक थी। कभी तो वह बिजली-सी पार्क के एक कोने से दूसरे कोने तक छलांग भरती हुई आंख से ओझल हो जाती, दूसरे ही क्षण बुलाये जाने पर एक कोमल शावक हिरणी-सी गोद में आकर बैठ जाती। पार्क में बैठे अन्य लोग जेनी को उत्साहित करने के लिए गेंद या अन्य कागज़ आदि का गोला फेंककर उसे लाने का आदेश देते जिसे वह तुरंत लाकर देती। उसकी स्पोर्टमैन शिप (आमोद-प्रमोद) के मनोरंजन से बन्नी को स्पर्धा होने लगी। जब भी मैं गेंद फेंककर दोनों को ललकारती, बन्नी जेनी को नहीं दौड़ने देते, उसे गुर्राकर भगा देते या खुद गेंद पर जाकर बैठ जाते। बचपन से यह खेल बन्नी अकेले खेलने के आदी थे। दौड़ने में वह जेनी को हरा नहीं सकते थे इसीलिए शायद धमकाकर भगा देना उचित समझते। लेकिन बाहर भी जेनी ने बन्नी को ललकारकर अन्य कुत्तों की तरह परास्त नहीं किया। उसके इस शालीन व्यवहार से वह दिन-प्रतिदिन सबकी प्यारी होने लगी और बन्नी साहब दिनोदिन उदास रहने लगे। उनकी चाल-ढाल ढीली पड़ने लगी। वह पार्क में जाकर भी दौड़ना पसंद नहीं करते और जब भी तेज़ धावक की तरह जेनी को पार्क के चक्कर लगाते देखते, दौड़कर उसे भौंक-भौंककर लताड़ने लगते। उनकी ईर्ष्या को देखकर हंसी आना स्वाभाविक था, लेकिन जेनी बन्नी का मान रखती। चुपचाप मेरे पास आकर बैठ

जाता। मुझे पता था कि चतुर जेनी अपनी ऊहापोह को, इस पसोपेश को किस तरह से रणनीति में सफलतापूर्वक पेश किया जाये, यह अच्छी तरह जानती है, शायद ही कोई अन्य कुत्ता उससे अधिक जानता होगा फिर भी वह इसका प्रयोग नहीं करती क्योंकि वह बन्नी की अतिथि थी। जानवरों में कितनी अधिक प्राकृतिक रूप से मान-मर्यादाएं होती हैं, वह उन्हें पालकर ही मनुष्य जान सकता है।

जेनी की चतुराई का प्रमाण उसने आते ही दे दिया था बन्नी को चेन में बांधकर रखने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। लेकिन जेनी के लिए बांधकर रखना आवश्यक था क्योंकि वह अपने मालिक की खोज में बाहर जाकर भटक सकती थी। एक दिन जेनी चेन सहित बाहर चली गयी और थोड़ी देर बाद अपना पट्टा और चेन के बिना हांफ़ती हुई घर वापस आयी। बाहर जाकर पता किया गया कि कौन उन्हें पकड़कर ले जाने की कोशिश कर रहा था तो पता चला पीछे की कालोनी का एक ज़मादार का लड़का उसे पकड़ रहा था। वह उसे घसीट रहा था कि जेनी झाड़ी में जा छिपी और किसी तरह पट्टे से अपनी गरदन बाहर करके भाग आयी है, लड़का खिसियाकर चेन और पट्टा लेकर लापता हो गया। पीछे की कालोनी से अक्सर कुत्ता चुराने के लिए ज़मादार के बच्चे आते रहते थे क्योंकि अच्छी जाति के कुत्ते-कुतियों के व्यापार से उन्हें बैठे बिठाये अच्छी रक़म मिल जाती थी। इस दुर्घटना के बाद जेनी को चेन करके रखने की आवश्यकता नहीं पड़ी। वह बन्नी की भांति हम लोगों के साथ घूमने जाती और लौटकर फ्रिज का ठंडा दूध डालते ही धार को मुंह से लगाकर गट-गट कर पी जाती, अपना दूध समाप्त करते ही वह अक्सर बन्नी का प्याला भी साफ़ करके रख देती। बन्नी को खाने-पीने जैसी छोटी-मोटी बातों में झगड़ा करना पसंद न था, फिर बन्नी की जेनी विशिष्ट अतिथि थी।

बन्नी की दिनोदिन बढ़ती उदासी को देख मुझे भी चिंता होने

लगी। उनकी घुंघराली लंबी पूंछ कभी भी ऊंची पताका की तरह लहराती हुई दिखलाई न पड़ती। वह चलते तो ठुमक-ठुमककर और अपनी पूंछ को नीचे किये रहते। पूंछ के घने बाल भी कम होने लगे। लगता था कि खिन्नता में बन्नी अपने बालों को नोचने लगे हैं और यही चाहते हैं कि यह अतिथि अपने घर लौट जाये। जिन कुत्तों को अकेले पाला-पोसा जाता है वह कतई पसंद नहीं करते कि कोई दूसरा कुत्ता आकर परिवार में रहे। यदि मालिक जिद करके दूसरे कुत्ते को रख लेता तो ये लोग अधिक दुःखी और असहाय होकर दम तोड़ देते हैं। बन्नी की उदासी की बीमारी को दूर करने के लिए यह अनिवार्य हो गया कि लेडी जेनी को उनके मायके तुरंत भेज दिया जाये। लेडी जेनी जैसे कूदकर आयी थी वैसे ही स्कूटर में बैठकर मालिक के साथ चली गयी।

जेनी के लौट जाने से बन्नी पूर्ववत् न हो सके लेकिन सुरक्षित और प्रसन्नचित्त रहने लगे थे। बन्नी पार्क का चक्कर शिथिल और मंद गति से ही लगाते। पहले की तरह फिरकनी-सी तेज़ गति से पार्क के तीन-चार चक्कर लगाकर दर्शकों के मन न लुभाते। यह आकर्षक घूमने की तीव्र चाल बन्नी ने अपनी शुद्ध संतति वाली पेमेरियन मां से विरासत में पायी थी, इसे वह अपनी संतान को न दे सके, इसका क्षोभ अकथनीय है।

दार्शनिक लोग जन्म और मरण को ही मुख्य मानते हैं। उसी की मीमांसा में लगे रहते हैं क्योंकि आत्मा-परमात्मा की उन्हें खोज रहती है। अन्य जीवधारी जन्म और मरण के बीच के काल से अधिक जुड़ते हैं, वर्तमान की परेशानियों को वह बेजबान लाचारी, कुंठा आदि की मानसिक त्रासदी में नहीं झेलते। उनमें तो वर्तमान से जुड़े रहने के लिए प्राकृतिक रूप से विशेष उत्साह और जीवन-शक्ति होती है क्योंकि जंगल में वही जीवित रह सकता है जो होड़ ले सके, हर तरह के

समायोजन कर सके। बन्नी में वह शक्ति अत्यधिक थी लेकिन उसको वह आपत्तिकाल में प्रयोग करते थे। जून के महीने में बन्नी को मैंने अपनी बड़ी बहन के पास लखनऊ में कुछ दिनों के लिए छोड़ दिया। वहां कूलर आदि की सुविधाएं न होने के कारण वह गर्मी से काफ़ी परेशान थे। ऊपर से मालिक अपरिचित वातावरण में छोड़कर चल दिया अतः उन्होंने खाना-पीना छोड़ दिया और एक खिड़की में बैठे मेरा इंतज़ार करने लगे।

मेरी बड़ी बहन स्वभाव से अत्यंत भोली और स्नेहमयी है। वह बन्नी के इस अनशन से परेशान हो उठी। वह बन्नी की मनपसंद चीज़ों को सामने रखकर खाने के लिए फुसलाती, लेकिन खाना क्या वह उनको सूंघता तक नहीं, केवल खिड़की में बैठा टकटकी लगाये प्रतीक्षा करता रहता। जब बच्चे लोग प्रेमपूर्वक आग्रह करते तो कान नीचे करके माफ़ी मांगने लगता। एक दिन खिड़की से कूदकर वे बाहर निकल गये। काफ़ी खोजने के बाद एक रिक्शावाले के पास मिले। वह भी परेशान था कि यह किसका कुत्ता है जो रिक्शे पर आकर बैठ गया है, उतरने का नाम नहीं लेता। मैं रिक्शा पर बन्नी को दीदी के यहां लायी थी अतः वह रिक्शा पर बैठकर मेरे पास पहुंचने की कोशिश कर रहा था, किंतु एक बेज़बान लाचार पशु अपनी इच्छा कैसे व्यक्त करे ?

इस हादसे के बाद दीदी ने चेन करके अपने पास लिटाना शुरू किया। दीदी को पता था कि बन्नी यदि टन हो जाये तो हमारी मां तक को बेहद परेशान कर देते थे। वह खाने-पीने के लिए इस कुत्ते के पीछे घूमती रहती। तरह-तरह की मनपसंद चीज़ों से लुभाती लेकिन यह सब प्रयत्न असफल, मानो इनकी खाने-पीने की नली में किसी ने डॉट लगा दी हो। ज़बरदस्ती कोई पेय पदार्थ इसके मुंह में डाला जाता तो यह होशियारी से बाहर निकाल देता है। नौलि क्रिया द्वारा अपच

को बाहर निकाल देते हैं। बड़े बेटे सलिल ने दीदी को सशंकित किया, "इतनी गर्मी में यह पानी भी नहीं पियेगा तो अवश्य मर जायेगा। किसी तरह इसके गले से दूध या पानी कुछ उतरना चाहिए। इसका रोज़ा तोड़ना ज़रूरी है।"

इसी तरह यह अम्मां जी को भी परेशान करता है, समझ में नहीं आता क्या किया जाये ? लाचार होकर दीदी ने कहा।

एक निरीह पशु के सत्याग्रह ने सलिल जैसे राजनीतिक युवा नेता को सक्रिय होने के लिए बाध्य कर दिया। वह राजनीतिक दांवपेच के अलावा कई धार्मिक अनुष्ठानों में विश्वास करते, जिनसे कहते हैं असाध्य कार्य सिद्ध हो जाते हैं। उनके पास ऐसी एक टोपी है जिसको पहनने से उनके मन को शक्ति मिलती है और काम में पूर्ण सफलता, अतः बन्नी को खाना खिलाने के लिए वह टोपी पहनकर अपने भाईज़ान के ध्यान में बैठ गये। भाईज़ान बड़े नामी सूफ़ी संत थे जिनकी मज़ार खद्दरा में है वहां आज भी काफ़ी लोग आते रहते हैं। सलिल कुमार उनके पास बचपन से आते थे और अनुग्रही होकर भाईज़ान ने यह टोपी उन्हें सुख-सुविधाओं को प्रदान करने के लिए बख़्शीश दी थी।

भाईज़ान की टोपी कोई बन्नी का मालिक थी जिनके इशारों पर बन्नी खुश होकर खाने-पीने लगते ? दुःखी होकर सलिल ने वह टोपी उतारकर बन्नी के क़दमों में रख दी और स्वयं अपने अंधविश्वासों के कुहासे में घिर गये। दूसरे दिन जब मैं लौटकर आयी तो सलिल ने सारा वृत्तांत सुनाया और हाथ जोड़कर विनती की, "मौसी जी आप बन्नी को अकेले कहीं छोड़कर न जाया करें, यह बेज़बान, बेबस, लाचार कुत्ता आपकी याद में मर जायेगा।"

उन दिनों मेरी मां की तबीयत ज़्यादा ख़राब थी अतः बन्नी को छोड़ना अनिवार्य था। मुझे विश्वास था कि इस आपत्काल में बन्नी

अपना सहयोग अवश्य देगा। अम्मा जी के साथ रखने पर वह उनके पलंग के नीचे घुसकर पूरे समय चौकसी करता रहेगा और उसके सफ़ेद बाल झड़कर रोगी की शय्या तक पहुंच जायेंगे। अम्मा जी को उसके बालों से खीझ आयेगी। वह कभी भी पसंद नहीं करती थी कि बन्नी उनके पानदान के पास या पलंग के पास आकर बैठे, क्योंकि बैठते ही उसके बालों का कोई गुच्छा उनके हाथ लग जाता और वह बन्नी को डांटती। बुढ़ापे की इस संतान को वह अनुशासित नहीं कर पाती थी। इसीलिए उन्हें यह प्यार भी बेहद करता था और सताता भी।

अम्मा जी को कई दिनों तक अस्पताल में रहना पड़ा। उन दिनों बन्नी बेहद उदास रहने लगा। अस्पताल से लौटीं तो वह बेहद कमज़ोर थीं, किसी स्ट्रेचर या पलंग पर लिटाकर ही ऊपर लाया जा सकता था। टैक्सी से उतारकर किसी तरह ड्राइवर तथा कुछ अन्य लोग अम्मा जी को पलंग पर ला रहे थे कि एकाएक बन्नी उत्तेजित हो उठे, वह किसी भी हालत में उन्हें निःसंदेह लेटा हुआ सहन न कर सका। अम्मा जी ने अनुरोध किया कि बन्नी को भी चेन करके उनके पलंग पर बैठा दिया जाये, जिससे वह अत्यधिक संवेगित होकर दूसरों को काट न ले। ऊपर आकर बन्नी अम्मा जी की गोद में बैठ गये और उनसे लिपटकर यह जानने की कोशिश करते रहे कि उनको क्या हो गया है ? परिवार के सदस्य बन्नी का यह रूप देखकर अपने आंसू न रोक पाये, क्या हाल होगा इस पशु का यदि अम्मा को कुछ हो जाये ? अम्मा जी तो बन्नी को कभी पलंग के पास भी बैठने की अनुमति नहीं देती थीं, उनके अनुसार कुत्ता महानिकृष्ट जाति का होता है, जिसे छूकर सिर धोकर नहाना आवश्यक हो जाता है। कुत्तों को दूर से ही रोटी देते हैं, लगता है, प्रेम-विह्वल होकर वह सारे नियमों को भूल गयी हैं। थोड़ी देर बाद स्वस्थ होकर बोलीं, "ये तो आज बेहाल हुआ

जा रहा था, वैसे भी अस्पताल से आकर मुझे सिर धोकर नहाना था। अब इसे मन भर कर गोद में बैठ लेने दो।" इसका उत्तर क्या दिया जाता ?

अम्मा की तबीयत शोचनीय दिशा में निरंतर बढ़ रही थी और बन्नी उनके पलंग के पास सर्प की तरह कुंडली बांधे बैठे रहते। डॉक्टर देखने आता तो आपत्ति करता क्योंकि एक कुत्ते का मरीज़ के पास बैठना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है लेकिन बन्नी वहां से हटने को तैयार न था। चेन करके दूसरे स्थान पर बांधने से वह शोर मचाता, जिससे अम्मा जी को और अधिक कष्ट होता। एक दिन तो हद ही हो गयी, अम्मा जी को अस्पताल में दिखलाने के लिए ले जाना था इसलिए बन्नी को घर में बंद करके भाई-बहन चले गये। मैं सुबह से ही काम पर गयी हुई थी। सुनने में आया कि बन्नी साहब नौकरों से विद्रोह करके अस्पताल की ओर बेतहाशा भागे। रिक्शा कुछ दूर ही निकला था कि भाग्य से बहन ने देख लिया कि बन्नी हांफते हुए आ रहे हैं, हारकर उन्हें बन्नी को भी अस्पताल ले जाना पड़ा। बीच रास्ते में छोड़ सकना संभव न था।

बन्नी का अम्मा जी से चिपका रहना असहनीय था अतः मैंने उसे अपनी प्रिय सहेली मालती जी के घर रखना उचित समझा। मालती जी की पुत्री मीनू एक दिन हमारे परिवार में आकर रही और उसने सहज ही बन्नी का स्नेह प्राप्त कर लिया। मीनू ने भी बड़ी बुद्धिमत्ता से उसकी सारी आदतें, खान-पान आदि को समझ लिया था और यह जानकर अति संतोष हुआ कि बन्नी ने वहां पर कोई सीन क्रियेट (दृश्य बनाना) नहीं किया। जिसका श्रेय निःसंदेह प्रिय मीनू को है। सुबह-शाम घुमाना, बाल संवारना, टिक निकालना और दिन भर कूलर में रखने के अलावा बन्नी के लिए क्वालिटी की आइसक्रीम, बिरयानी आदि मीनू अपने प्रिय मामा से मंगवाकर रोज़ खिलाती।

इतने लाड़-प्यार में बन्नी हम लोगों को कुछ देर के लिए भूल गये थे, अच्छा हुआ। मीनू का कोमल हृदय बन्नी को छोड़ते समय अत्यधिक व्याकुल हो उठा। बन्नी तो उस बालिका के जीवन का अभिन्न अंग बन चुका था, लेकिन बन्नी का घर वापस लाना ज़रूरी था। अम्मा जी का स्वर्गवास हो गया था। मीनू बन्नी के वियोग में कई दिनों तक रोती रही और सुनते हैं कि उसे मंद-मंद बुखार रहने लगा था।

घर वापस आकर बन्नी सीधे अम्मा जी के कमरे में गये। वहां केवल एक दीपक जल रहा था। बन्नी गुम-सुम बाहर आकर बैठ गया और पूरे दिन उसने कुछ खाया-पीया नहीं और न ही किसी तरह की हठ की। उस मूक पशु को बतलाने की आवश्यकता नहीं थी कि अम्मा जी इस संसार में नहीं हैं। इसके अतिरिक्त बन्नी ने अपनी भावनाओं को अनोखे ढंग से प्रस्तुत किया जिससे स्पष्ट था कि वह अम्मा जी की मृत्यु का शोक मना रहा है और अपने दुःख को जीवन-पर्यंत मनाता रहेगा। अम्मा जी की बीमारी में बन्नी उनके साथ हर तरह के फलों को बेहद चाव से खाते थे। वह पहला भाग उसे देकर खाती थीं, विशेषकर मुसम्मी, संतरा आदि की कटोरी को वह अपने पंजे में दबाकर एक-एक रेशे का रस चूसकर खाली कर देता था। मूंगफली अम्मा जी को विशेष प्रिय थी। उनके साथ बन्नी मूंगफली छीलकर खाता। सेब, केला आदि फलों का छिलका निकालकर दिया जाता था। फलों का एसोसिएशन (संबंध) अम्मा जी से होने के कारण बन्नी ने फलों को खाना छोड़ दिया, मानो सारे फल रसविहीन हो गये हों। जब भी उसे कोई फल देता। वह सूंघकर छोड़ देता। इस तरह से अपनी पीड़ा व्यक्त करने की अद्‌भुत प्रणाली बन्नी जैसे जानवर में ही होती है।

बन्नी तो तहे दिल से प्यार करता था और उस व्यक्ति के लिए एक विशिष्ट स्थान एसोसिएशन (संबंध) के रूप में उसकी

स्मृति-पटल पर रहता। कहते हैं, जानवरों में दीर्घकालीन स्मृति (लौंगटर्म मेमोरी) नहीं होती क्योंकि तर्कशक्ति न होने के कारण मनुष्यों की तरह शब्द चयन करना, संदर्भ का सार निकालना आदि संभव नहीं है। मनोवैज्ञानिक प्रयोग द्वारा संभव है बन्नी की एसोसिएशन शक्ति का ज्ञान मिल पाता किंतु इसमें संदेह नहीं कि इस कुत्ते में लघुकालीन और दीर्घकालीन स्मृति तथा तर्कशक्ति भी अन्य कुत्तों से अधिक थी। इस बात का ज्ञान मुझे सहसा उस दिन हुआ जब बन्नी अपने ख़रगोश-से कान ऊंचे किये दरवाज़े में मुंह लगाये कुछ सूंघ रहे थे। घंटी बजने से पहले ही वह ऐसी आवाज़ें करने लगे जैसे उनका सगा-संबंधी आया है, कुछ ऐसी आवाज़ें वह परम हितैषी के लिए निकालते थे अतः घंटी बजने से पहले मैंने दरवाज़ा खोला। बन्नी ने दौड़कर रामनगर वाली महिला का प्रेम से अभिवादन किया। वह महिला किसी परिचित पुरुष के साथ थी, लेकिन बन्नी उससे कुछ भी नहीं बोले। महिला ने बन्नी को प्रेमपूर्वक गोदी में ले लिया। दोनों दो बिछड़े प्रेमियों की तरह गले लग रहे थे। दोनों की ख़ुशी को शब्दों में कहना असंभव है। बन्नी का रोम-रोम प्रसन्नता से खिल उठा था, इसका आभास उसके रेशमी सफ़ेद बाल थे जो उस समय तार-तार हुए हवा में झूमने लगे थे। मानो वीणा के तारों पर सप्तक में मींड़ खिंच गयी हो। वह महिला प्रेम में फूली नहीं समा रही थी। दोनों के मिलन में मैं अवाक् दूर छिटककर खड़ी हो गयी। थोड़ी देर में विनय से द्रवित होते हुए महिला बोली, "बहन जी, आप कहेंगी कि इतने दिनों बाद मैं क्यों मिलने आयी हूं। मेरा मन तो बन्नी को देखने के लिए रोज़ ही छटपटाता रहता, लेकिन इतनी दूर मुझे कौन लेकर आता ? आज किशन भइया ने यहां लाकर बन्नी से मिलवा दिया। यह कुत्ता तो दो-चार दिन रहकर ही मेरा जी चुरा ले गया। आपने इसे ढूंढ़ने में कितना कष्ट उठाया था। क्यों रे मन मोहना !"

महिला की मनःस्थिति को स्पष्ट करते हुए किशन भइया बोले, "इस बेचारी के पास संतान नहीं है इसलिए इसका पति इसे रोज़ ताने सुनाता है, वह बड़ा कठोर हृदय का है, इसे मारता-पीटता है, चाहता है यह कहीं चली जाये तो वह दूसरी शादी कर ले। बेचारी ने इस कुत्ते को अपनी संतान की तरह रखा था, इसीलिए इसे बड़ा मोह हो गया। अब तो अस्पताल में दिखाकर इसका इलाज करवा दें, बेचारी संतान का मुंह देखने के लिए तरस रहीं है।"

"संतान होने के लिए पति-पत्नी दोनों की जांच होनी चाहिए क्या इसका पति जांच करवाने आयेगा ? पुरुष लोग समझते हैं कि औरत ही बांझ होती है। लेकिन पुरुष की कमी के कारण संतान नहीं हो रही है कि औरत की कमी के कारण, इसका पता अस्पतालों में लगाया जा सकता है और उचित उपचार करके इसकी गोद भर सकती है।" मैंने सुझाव दिया।

"इसका पति तो आने से रहा। वह तो इसी को सारा दोष देता है और मारता-पीटता है। उसकी बात न पूछिए तो अच्छा है, वह तो आपका कुत्ता भी बेचने वाला था। भाग्य से आप आ गयीं नहीं तो वह रोहतक ले जाने वाला था। इस बेचारी को कुत्ता वापस कर देने के लिए उसने खूब धुना। पास-पड़ोसियों ने बीच-बचाव किया। पुलिस आपके साथ थी और कुत्ता अपने मालिक को पहचान गया था ऐसे में वह ख़ुद भी घर पर होता तो कुत्ता वापस करना होता। उसे तो इसे बुरा-भला कहने के लिए कुछ चाहिए। दिन भर बड़बड़ाता रहता है, इतनी गालियां देता है कि पड़ोसियों के कान..."

"बहन जी को ये दुखड़ा क्यों बता रहे हो," महिला बीच में टोककर बोली, "मैं तो अपने टामी से मिलने आयी हूं। कितना सुंदर लग रहा है, हम ग़रीब इसे क्या रख पाते। थोड़े दिनों में ही दूध पिलाना मुश्किल हो गया था। पहले पहल तो इसके लिए मछली लेकर

आया था लेकिन टामी ने खायी नहीं तो उसने हलवाई के यहां से कुल्हड़ में दूध लाकर दिया कितने ही कुल्हड़ हमारी छत के ऊपर इकट्ठा हो गये थे। इसकी खातिर तो मेरे घर वाले ने खूब की थी, यह तो मेरी प्यारी कुतिया है।" कहते हुए महिला ने बन्नी को छाती से लगा लिया। बन्नी भी प्रेम से उसका गाल छूने लगे।

"इसमें शक नहीं कि तुम दोनों ने इस कुत्ते को बड़ी अच्छी तरह रखा। चाहो तो खर्चे-पानी का पैसा मुझसे ले लो।" मैंने प्रस्ताव रखा।

"पैसे की क्या बात है। मैं पैसा वसूल करने नहीं आयी हूं। हम ग़रीब के घर यह घूमता-फिरता आया। मैंने इसे अपनी छाती से जुड़ाकर रखा। मेरे मर्द ने पेट काटकर दूध पिलाया। जो खिलाया-पिलाया इसने प्रेम देकर वसूल कर दिया।" कहते हुए महिला की आंखों में आंसू झलक आये थे।

"तुम्हारा पति इसे बेचकर चार पैसे बनाना चाहता था। इसीलिए तुम्हें परेशान करता है। पैसे से मदद मिलने पर वह तुम्हें ताने देना बंद कर देगा।"

"उनकी भली-चलायी, उन्हें तो बहाना चाहिए। बाहर कमाई कर नहीं पाते, घर वाली को मार-पीटकर अपनी खीज उतारते रहते हैं। बहन जी, उसे बच्चा चाहिए, जो भगवान् मुझ अभागिन को नहीं देगा।" महिला ने सफ़ाई दी।

"तेरे कारण बच्चा नहीं होता यह तू क्यों समझ बैठी है? मैं तुम्हें ज़रूर अस्पताल में जाकर दिखाऊंगी, लेकिन क्या जाने तेरे मर्द के वीर्य में कुछ कमी हो, उसका भी आना ज़रूरी है, लेकिन तुम खुद कह रही हो वह अस्पताल में नहीं आयेगा। ऐसे में डॉक्टर लोग क्या कर सकते हैं?"

"बहन जी, भगवान् की इच्छा होती तो मेरी गोद कब की भर

गयी होती। जब यह कुत्ता मेरे पास भटकता हुआ आया तो मुझे लगा भगवान् ने मेरी सुन ली। हम पति-पत्नी इसे बच्चों की तरह रखते। मैं इसे अपनी खाट पर सुलाती। टट्टी-पेशाब के लिए भी नीचे नहीं ले जाती। एक मिनट भी इसे आंख से ओझल नहीं होने देती। मुझे पता था कि मेरा मर्द इसे बेच आयेगा। इसीलिए मैंने इसके पैरों में घुंघरू-बांध दिये थे। जैसे ही यह चले मुझे पता चल जाये कि कौन इसे ले जा रहा है। यह मेरे साथ छाया की तरह रहता। हम दोनों में मां और बच्चे जैसा प्यार हो गया। जब भी मेरा पति इसे बेचने की बात करता, मैं खूब रोती। भगवान की इच्छा थी इसलिए यह अपने मालिक के पास पहुंच गया। यहां जिस सुख से यह रह रहा है, ऐसा सुख हम स्वप्न में भी नहीं दे सकते थे। कितना भाग्यशाली है यह कुत्ता । मेरे पति ने लाख जतन किया लेकिन इसे बेच नहीं पाया। भगवान ने न चाहा होता तो मुझ दुखियारी के रोके क्या होता ? आज देखकर मेरी छाती जुड़ा गयी। क्या यह भी मेरी याद करता था ? यह आपकी याद तो करता था। सच मानिए, रोज शाम को आंसुओं से यह कुत्ता रोता था, जैसे अपने मालिक की याद कर रहा हो। उस समय मुझे भी रोना आ जाता था। बहन जी, मेरा दिल बड़ा कच्चा है।'' कहकर वह महिला चुप हो गयी जैसे किसी सोच में पड़ गयी हो।

''भगवान् की कृपा से ही यह वापस आया, वैसे हम लोग तो ढूंढ़कर निराश-से हो गये थे। तुम्हारे रामनगर में बलविन्दर ने बड़ी मदद की थी। आज तो तुमने घर देख लिया। अब जब भी मन करे आकर अपने टामी से मिल जाना।'' मैंने कहा।

''मेम साहब, हम ग़रीब लोगों का मन जो करता है वह कहां हो सकता है ? चलो, भाई चलो, इस मनमोहना से लगन लगाना बेकार है।'' कहकर वह महिला बन्नी को गोद से उतारकर चलने लगी। बन्नी के परम हितैषी का उचित सत्कार करना मेरा भी परम कर्तव्य

था। जल-पान कराकर मैं बन्नी के साथ उस महिला-पुरुष को नीचे तक छोड़ने आयी, लेकिन विदा करते समय बन्नी साहब एकाएक बिदक गये। वह किसी भी हालत में उस महिला को अपना बदन छूने और प्यार से हाथ फेरने के लिए तैयार न थे। उसकी रुखाई को देखकर मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। बन्नी स्वागत करते समय तहे दिल से प्यार करता था लेकिन विदा के समय कोई अनुमान भी नहीं लगा सकता था कि यह कुत्ता केवल अपने मालिक और उसके परिवार वालों के साथ जुड़ा है। वह अन्य व्यक्तियों के साथ सीढ़ियों से उतरते ही तटस्थ हो जाता था। पता नहीं पशु जानते हैं या नहीं किंतु उनका व्यवहार इस ज्ञान का द्योतक है कि संसार के रंगमंच में हर एक व्यक्ति की एक भूमिका निर्धारित होती है। उस भूमिका को निभाते समय तन्मय रहना है। अपनी भूमिका (रोल) करते समय अपने आपको भूल जाना अभिनय मात्र है लेकिन भूमिका अदा करने के बाद, भूमिका में खो जाना नादानी है। यह ज्ञान बिरले पुरुष जान पाते हैं लेकिन लगता था बन्नी जानते थे।

बन्नी की रुखाई से उस महिला को कितना दुःख हुआ होगा, यह पशु होने के कारण बन्नी न समझ सके। मेरे लिए उस महिला की विदाई का दृश्य एक अत्यंत दुःखद स्मृति बन गया क्योंकि दो-चार दिन बाद ही सरदार बलविन्दर सिंह रामनगर से मेरे पास भेंट करने आये। बलविन्दर की हुलिया बदली हुई थी। दाढ़ी-मूंछ कटी हुई थी, सिर पर पगड़ी की जगह कटे हुए लंबे बाल थे। वेशभूषा से लग रहा था कि उसने कई दिनों से नहाया-धोया न हो, गले में अवश्य लाल रेशमी रूमाल बंधा हुआ था। यदि वह अपना नाम बताकर नमस्ते न करता तो मैं उसे पहचान भी न पाती क्योंकि वेशभूषा के अतिरिक्त उसकी चाल हड़बड़ाई हुई थी। गरदन पतली, गाल चिपके हुए, आंख लाल और आवाज़ में कंपन था, जैसे वह बीमार हो या किसी नशीली

दवा का सेवन करने से उसका स्वास्थ्य बिगड़ गया हो। पहले तो वह खिलखिलाकर हंसता था लेकिन अब उसकी फीकी-फीकी मुस्कान ऐसी लग रही थी कि यह अब रोया। मुझे अवाक् देखकर वह बोला, "मुझे पहचाना नहीं क्या, मैं बलविन्दर हूं जी, नमस्ते !"

"कहो, कैसे हो बलविन्दर ? तुम्हारी लंबी उम्र होगी, थोड़े दिनों पहले वह औरत मेरे कुत्ते से मिलने आयी थी, जिसने बन्नी को रामनगर में छिपाकर रखा था। उस दिन तुम्हारी चर्चा भी हुई।" बलविन्दर मुझे घूरता हुआ बोला, "उस औरत ने कल मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा ली। उसका आदमी उसे बहुत मारता था, बेचारी ने जुल्म से छुटकारा पाने के लिए आत्महत्या कर ली।"

"मेरे घर तो वह काफ़ी खुश लग रही थी। उसके साथ किशन नामक पड़ोसी भी था। उस दिन तो ऐसा कुछ नहीं लग रहा था कहते-कहते मैं रुक गयी और एकाएक मेरी आंखों में आंसू आ गये।"

"सुनते हैं, अपने घर में खाना बनाते समय उसकी मृत्यु हुई।" बलविन्दर ने बतलाया।

"अरे हो सकता है, दुर्घटना हो गयी होगी, उसे आत्महत्या क्यों कहते हो ?" मैंने प्रतिवाद किया।

"दुर्घटना कैसी, उसके कपड़ों में मिट्टी का तेल छिड़का हुआ था। फ़ौरन ही उसे पड़ोसी अस्पताल ले गये थे, वहां मरते समय उसने क़बूल भी किया कि वह मरना चाहती है और जानबूझकर उसी ने आग लगायी है। उसका पति तो बाहर गया हुआ है। डॉक्टरों का कहना था वह घर में ही 75 प्रतिशत जल चुकी थी।" कहकर बलविन्दर पत्ते की तरह कांपने लगा। मैंने उसे फ़ौरन कुर्सी पर बैठाकर एक गिलास ठंडा पानी पिलाया।

"अपना क्या हाल बना रखा है तूने, बलविन्दर ? कितना

रोबीला गबरू जवान था तेरा शरीर, इतने थोड़े दिनों में ही हड्डियों का ढांचा बनाकर रख दिया है।" मैंने दृढ़ता से पूछा।

एक कुटिल मुस्कान भरकर बलविन्दर बोला, "इंदिरा गांधी की हत्या के बाद कड़ा, केश, कृपाण कैसे रख पाता ? जिंदा हूं यही बड़ी बात है। जुल्मों को खत्म करने के लिए उस अभागिन औरत की तरह आत्म-हत्या तो..."

"बस चुपकर, सरदारों ने अत्याचार को खत्म करने के लिए ही तो कड़ा, केश आदि रखे थे। अपनी निशानी खत्म कर देने से तो जुल्म बढ़ेंगे कि खत्म होंगे ?"

"जब प्राण बचाने हों तो धर्म को लेकर क्या चाटें ?" बलविन्दर तपाक् से बोला। "तो आपत्काल में रख सके वही धर्म होता है, धारयति इति धर्मः, क्या तूने सिख धर्म छोड़ दिया है ?" मैंने उसे ललकारा।

"आज धर्म का कौन पालन करता है ? आजकल तो धोखा-धड़ी, छल, अपराध, तस्करी, घूसखोरी जैसों का बोलबाला है। जिसके पास पैसा है, वही सच्चा सरदार बन सकता है, चाहे पैसा कैसे भी आता हो।"

"लगता है तेरा सिर फिर गया है। पैसा तो आजकल नशीली चीजों की तस्करी से बेहद जल्दी आ जाता है। क्या तूने उसी का धंधा शुरू कर दिया है ? सच-सच बता, मैं किसी से नहीं..."

"सच-सच बता दूंगा तो क्या आप मुझे नशीली दवाओं से छुटकारा दिलवा देंगी।" बलविन्दर ने टोककर कहा।

"कोशिश पूरी करूंगी जैसे तूने बन्नी को ढुंढ़वाने के लिए मेरी की थी लेकिन डॉक्टर लोग पूछेंगे कि तू दिलोजान से नशे की आदत को छोड़ना चाहता है कि नहीं ? उस समय तू पीछे न हट जाना।"

"छोड़ना न चाहता तो यह सब बात क्यों बताता ? यह आदत तो लगता है मेरी जानलेवा लाचारी बन गयी है। शरीर में इसके न लेने से कंपकपी होने लगती है, नज़र गड़बड़ायी-सी हो जाती है और ज़बान लड़खड़ाने लगती है। आजकल भूख-प्यास सब ख़त्म हो गयी है, शरीर दिनोदिन सूखता जा रहा है। न रात में चैन मिल पाता न दिन में, केवल दवाई लेने के बाद कुछ राहत-सी मिलती है। किसी काम में मन नहीं लगता है। अजीब बेचैनी और घबराहट बनी रहती है, शरीर पसीने से तर-तर हो जाता है। अब तो दुनिया में कुछ भी अच्छा नहीं लगता। घर का सारा सामान इस बुरी आदत के चक्कर में बिक गया है। मां भी रोटी पकाकर मुझे दे नहीं सकती क्योंकि भावजें कहती हैं कि मैं चोर-उचक्का हूं, बुरी संगत में रहता हूं। कहीं मेरी आदतें उनके बच्चों को न आ जायें, वे तो मुझे छूत की बीमारी से भी बुरा समझती हैं। मैं तो कभी भी उन्हें पसंद नहीं था। मुझे वे आवारा बदचलन कहती थीं। इसी ग़म को भूलने के लिए मैंने नशीली दवाएं खायीं, वह सहारा आज मुझे खाये जा रहा है।" बलविन्दर कहते-कहते रो पड़ा।

"अपना मन छोटा न कर। नशीली दवाओं की लत पड़ने पर एक बीमारी बन जाती है। इस बीमारी का इलाज़ न करवाने से आदमी न घर का रहता है न घाट का। घर वाले क्या करें, समाज भी नफ़रत करने लगता है।" धीरज देते हुए मैंने कहा।

"मैंने अस्पताल में रहकर इसका इलाज करवाया था। मेरी मां ने खूब सेवा की थी। एक दफ़ा आदत छोड़ देने के बाद मैंने काफ़ी कोशिश की थी कि मैं किसी काम-धंधे में लग जाऊं, लेकिन मेरे पास भाइयों की तरह कोई हुनर नहीं है, न ही मैं पढ़ा-लिखा हूं। इस उम्र में ऐसा कौन धंधा है जो मैं कर सकता हूं, पैसा कमाने के लिए नशीली दवाओं की तस्करी में फिर जा पहुंचा, यार-दोस्त छोड़ते

कहां हैं ?"

"आजकल नशीली दवाओं की तस्करी में लगा हुआ है और खूब पैसा बना रहा है लेकिन खुद के बरबाद होने के बाद यह पैसा किस काम का ?"

"पैसों की बात न पूछो दीदी, पैसा जैसे आता है वैसे ही चला जाता है। ऊपर से इस धंधे में पुलिस का भय बना रहता है। बड़े-बड़े दादा इस धंधे में हैं। आप इन सब बातों को न पूछें तो अच्छा है।"

"घर और पड़ोस में तू बड़ा दादा बना हुआ है। बड़ी मछली छोटी मछली को निगल लेगी। इसी भय से तुझे सारा संसार डरावना लग रहा है। बलविन्दर, तुम अपने अंदर के भय से भयभीत हो, इसीलिए, हिंसा पर उतारू हो जाते हो। घर वाले शत्रु नज़र आते हैं। अपने अंदर बैठे शत्रु पर चोट करो। उसे भागने न दो वरना वह तुम्हें नष्ट कर देगा।" कहते-कहते मैं रुक गयी क्योंकि मुझे लगा, बलविन्दर मेरी बातों को नहीं सुन रहा था। वह तो मेरे सामने बैठा-बैठा सो रहा था। मैंने उसे झकझोरा और अस्पताल चलने के लिए तैयार करना चाहा। वह कल आने का वायदा करके चला गया, लेकिन कल कब आता है ?

बलविन्दर की यह भेंट मेरे मन-प्राण पर कुहासा बन छा गयी। यह नौजवान पथभ्रष्ट क्यों हो गया है ? आत्महत्या क्या नारी जीवन की विषमताओं से मुक्त होने का साधन है ? हमारे समाज में जो हालत सामने हैं वह दिन-पर-दिन मुश्किल होती जा रही है और भविष्य में ऐसे असामान्य व्यवहार से अंधकार-ही-अंधकार है। इन जटिल सामाजिक कुरीतियों से मुकाबला करने के बजाय किशोर मन भटकावों में उलझकर उत्तेजनामय उन्मादों के दलदल में फंसकर रह जाता है। मनुष्य ने प्रगति के पथ पर निरंतर बढ़ने के लिए तो इन

विनाशकारी घातक नशीली दवाओं की खोज नहीं की थी लेकिन इनका व्यापार विश्वव्यापी बन अब मनुष्य का घातक शत्रु बन बैठा है। शायद यह भी आतंकवाद की तरह है, जो निहत्थे लाचार पर आक्रमण कर भयभीत करने के आधुनिक विनाशकारी सभ्यता के अमोघ अस्त्र हैं। काश, मानव चेतना वैदिक काल की अभय स्थिति में वापस लौट पड़े, जिसकी हमारे ऋषि-मुनियों ने परिकल्पना की थी।

"मित्र से अभय, जिसको जानते हैं उनसे अभय, रात्रि से अभय, दिन को अभय और सारी दिशाएं मेरी मित्र बने।"

बलविन्दर लौटकर वापस नहीं आया, शायद कभी भी न आये क्योंकि मैंने वह स्थान छोड़ दिया है जहां वह मिलने आया था। मेरा नया मकान उसे कैसे पता लगेगा ? मुझे पता नहीं मेरी बातों का असर उस पर पड़ा या नहीं। लेकिन मानव-स्वभाव है कि जिसे वह बदलना ठीक समझता है फिर भी बदल नहीं पाता तो मन में ग्लानि बढ़ती जाती है। बलविन्दर जैसे चरित्र में ग्लानि माना न पनप पाये, किंतु लज्जा का संवेग अवश्य उसे मेरे पास न पहुंच सकने के लिए कचोटता रहता होगा। मेरे लिए बलविन्दर की छवि नशीली दवाओं के सेवन या तस्करी करने के कारण करुणा की पात्र है। जिस परिवेश में वह पला-पुसा और बड़ा हुआ है वहां कितने अवसर उपलब्ध कराये गये थे कि उसमें छिपे मानवीय उद्गार उजागर होते ? बन्नी को ढूंढ़ते समय बलविन्दर की छवि अति उत्साही मानवीय गुणों से ओतप्रोत थी। कितनी सरलता से उसने मेरी पीड़ा को आत्मसात् किया था और अपनी साहसपूर्ण सूझबूझ से कुत्ते जैसे जानवर के लिए योजनाबद्ध कर्मठता दिखलायी। कहते हैं कि मानवीय गुण तो हर मनुष्य अपने-अपने भीतर के सत्य की अग्नि को जलाकर उजागर करते हैं। बलविन्दर के छिपे सत्य की अग्नि को कोई अन्य उजागर कर सकता

है ? यह पूछने का समय आज के समाज में किसके पास है क्योंकि स्वयं बलविन्दर मनुष्य होकर अपने इस अधिकार को नशीली दवाओं की गहराइयों में खो चुका है। उसे ही खोजना होगा यह कहना कितना सरल है, करना कितना कठिन है। अतः यह सब जानते हुए मैंने मौन रहना ही उचित समझा। किंतु पशु होकर बन्नी ने मृत्यु से अभय रहने का सत्य उजागर कर दिया, तब मेरा मौन भंग होना आवश्यक हो, गया । उसकी चर्चा सुनने के लिए आपके पास ढेर-सा समय और धीरज होना चाहिए ।

कुत्ते, बिल्लियों को अपने घर से अत्यंत मोह होता है। शायद इसलिए घर बदलते समय बन्नी बेहद परेशान थे। उन्होंने सामान बांधते समय काफ़ी परेशान किया । नये घर आकर बन्नी शिथिल-काय अधिक हो गये, जिसे हम लोगों ने उनकी वृद्धावस्था के अनुरूप शारीरिक परिवर्तन समझा। कुत्तों की आयु के अनुसार वह पैंसठ-सत्तर के होने आये थे लेकिन बुद्धि-स्मृति शक्ति आदि में कोई परिवर्तन नहीं था। आयु के साथ उनका चंचल स्वभाव एक परिपक्व प्रौढ़ की तरह गंभीर बनता जा रहा था, जल्दी-जल्दी उद्विग्न नहीं होते थे तथा खान-पान नियमित रूप से करते, सुबह-शाम घूमने जाते और मेरे साथ बैठकर ध्यान करवाते। ध्यान में मेरे साथ बैठने की आदत बन्नी की बचपन से थी जिसकी चर्चा मैंने आपसे पहले नहीं की है। ध्यान में बैठे होने पर घंटी बजने पर भी अब वे दौड़कर स्वागत करने नहीं जाते। ना ही भौंकते जिसे देखकर लगता कि यह कुत्ता पहले जन्म में अवश्य कोई योगी रहा होगा। बड़े-बड़ों का मन ध्यान में इतना एकाग्रचित्त नहीं होता जितना बन्नी का हो जाता था ।

बन्नी को सजातीय लोगों से मिलना-जुलना शुरू से कम भाया अब तो वह वानप्रस्थी हो गये थे। नये मुहल्लों में ज़्यादातर लोगों के पास बन्नी की जाति के पालतू जानवर थे, लेकिन बन्नी उनको देखकर

अनदेखा कर देते। यदि कोई उन्हें डराने-धमकाने की कोशिश करता तो वह मंथर गति से अपना रास्ता बदल लेते जैसे राजा जा रहा हो और कुत्ते भौंक रहे हों, उसे क्या परवाह ? यदि वह स्नेह से पास आकर उन्हें सूंघने लगता तो वह बिना उत्तेजित हुए खड़े हो जाते। दो-चार मिनट में ही मिलने-जुलने के बाद घर वापस आ जाते। भारी बदन होने के कारण छोटा-मोटा कुत्ता उन्हें परेशान भी नहीं करता। पड़ोस के बच्चे अवश्य हंसकर कहते, "अमा, यह तो सफ़ेद भालू का बच्चा लगता है।" स्नेह से जो भी बच्चा उनके बालों को छूता या थपथपाना चाहता बन्नी प्रेम से करवाते। थोड़े ही दिनों में बच्चों का डर निकल गया और वह बन्नी को देखकर फ़ौरन उसकी कुशल-क्षेम पूछने भागे-भागे आने लगे। यहां भी बन्नी की सबसे पहचान हो गयी थी अतः बच्चों में उनका सत्कार वैसा ही होने लगा जैसा पुराने पड़ोस में होता था। वे केवल ख़रगोश की तरह चौकड़ियां भरकर बच्चों का विनोद नहीं कर पाते थे। अक्सर बच्चों की गेंद लेकर भाग जाना और उन्हें अपने पीछे-पीछे दौड़ाने में बन्नी को मज़ा आता था।

बन्नी को धार्मिक अनुष्ठानों में सदैव से अभिरुचि रही। इसीलिए हवन करते वक़्त वह इस बात का विशेष ध्यान रखते कि कोई घंटी बजाकर विघ्न-बाधा न डाले। उस समय हमारे घर का काम करने वाले नौकर भी पूर्ण शांति रखते और बन्नी उन पर पूरी चौकीदारी। मज़ाल है कोई आगंतुक घर में इस समय आ जाये। हवन समाप्त होने पर वह आरती अत्यंत उत्साह से लेते। इसी तरह किसी अन्य पर्व पर हुई पूजा-पाठ को श्रद्धापूर्वक देखते रहते और आरती, प्रसाद आदि के लिए लालायित रहते। भाईदूज और राखी पर वह अपने माथे पर रोली करवाते और बहनों को वैसा ही आनंद आता जैसा अपने भाइयों के साथ आता। मेरी छोटी बहन के साथ तो वह रामायण का पाठ ऐसे बैठकर सुनते जैसे काकभुसुंडी से रामायण सुन

गरुड़ जी पुलकित मन अत्यंत हर्षित हो रहे।

नये मकान की सीढ़ियां बिलकुल सीधी बनी होने के कारण बन्नी को उसमें चढ़ने-उतरने में तक़लीफ़ महसूस होने लगी। उनका शरीर शिथिल मांस-पेशियों वाला हो गया था। इसलिए सांस फूल जाती और पैरों पर ज़रूरत से ज्यादा ज़ोर पड़ता जो उनके बचपन की चोट को पीड़ाग्रस्त कर देता। उन्हें ऊपर चढ़ते समय विशेष तकलीफ़ होती। लेकिन वह साहसपूर्वक पीछे के पैरों पर अधिक बल देते या कुछ टेढ़ा चलकर धीरे-धीरे चढ़ जाते। उनको अशक्त होता देख परिवार के सदस्यों का कर्तव्य हो गया था कि उन्हें प्रेमपूर्वक सीढ़ियों पर चढ़ाया जाये। शुरू-शुरू में वह इसके लिए तैयार न थे कि कोई उन्हें गोद में बिठाकर ऊपर लाये। उसके सम्मान को धक्का न लगे, अतः हम लोग सीढ़ियों पर उसे अकेला छोड़कर अंदर आ जाते थे। लेकिन मन में भय लगा रहता था कि कोई अन्य देशी कुत्ता आकर उन पर हावी न हो जाये। बन्नी ने बड़ी शालीनता से सीढ़ियों पर चढ़ने-उतरने का समझौता कर लिया। लेकिन बचपन की चोट उन्हें असहनीय भयंकर पीड़ा से ग्रसित करने लगी। शारीरिक व्यायाम से उनका शरीर और अधिक शिथिल होने लगा और चर्बी तेजी से बढ़ने लगी। हास-परिहास में मेरी छोटी बहन बन्नी को इस नये मकान का मालिक और अपने को उसका चाकर कहती। यह भी उन्हें अपने काम में विलंब करने पर नाराज़ होता या गुर्राकर डांट देता जिसका कारण निःसंदेह उसकी वृद्धावस्था की स्नायु कमज़ोरी थी। उसके स्वास्थ्य का विशेष ध्यान रखने के लिए मैंने भी नियमित रूप से डाक्टरी परीक्षण करवाना अपना कर्तव्य समझा।

बन्नी को डॉक्टरों के पास जाने का बचपन से अभ्यास था। नये पड़ोस में भाग्य से कुत्तों के विशेषज्ञ ने अपना नया क्लिनिक (औषधालय) खोला तो उस सुअवसर का लाभ उठाने बन्नी को ले

गयी। उनकी जांच-पड़ताल के अनुसार बन्नी का स्वास्थ्य आयु के अनुपात से संतोषपूर्ण था। मोटापा कम करने की सलाह के साथ नियमित रूप से गर्म पानी में नमक डालकर पुरानी चोट की सिकाई करने का आदेश मिला, साथ-साथ जेरीफोर्ड आदि ढेर सारे टॉनिक भी लिख दिये जिन्हें वृद्धावस्था में देने से स्नायु मज़बूत हो जायें। मेरी छोटी बहन ने डॉक्टर की हर सलाह न मानी। उनके अनुसार बन्नी काफ़ी कम खाता था। वह स्वयं खाने-पीने के मामले में सतर्क था और यदि उसमें कोई कटौती की जायेगी तो वह जितने दिन जीने वाला है उतना भी न जी पायेगा बुढ़ापे में इस तरह का अनुशासन उसे असहनीय होगा। एक तरह से उनकी बात में वज़न था। कुत्ते स्वयं जानते हैं कि उन्हें कितना खाना खाना चाहिए। उसका मोटा या शारीरिक परिश्रम न करने के कारण था अत: उसकी चोट का विशेष खयाल किया गया। अक्सर नमक डालकर गर्म पानी का सेक करने के बाद आयोडेक्स लगा देते या पट्टी बांध देते, जिससे उसे काफ़ी आराम मिलता। बन्नी ने भी सीढ़ियों से उतरने-चढ़ने के प्रयास फिर शुरू कर दिये शायद टॉनिक देने से उसके शरीर में नयी स्फूर्ति आ गयी थी। बाहर निकलकर दूर तक घूमने में अधिक प्रफुल्लित हो जाता और सीढ़ियों पर चढ़ते समय उसका प्रयास ट्रेकिंग करने वालों की तरह मंत्रमुग्ध कर देता। हर सीढ़ी पर सावधानी से पैर जमाता हुआ धैर्यपूर्वक वह ऊपर तक चढ़ जाता और ऊपर आने पर हम लोग उसका स्वागत कुछ मीठे बिस्कुट या मुरमुरा देकर करते, जिन्हें वह चाव से स्वीकार करता।

मालिक की खुशी के लिए जान क़ुर्बान करने में बन्नी जैसा कोई वफ़ादार कुत्ता शायद ही दूसरा होगा। मालिक के अतिरिक्त उसके परिवार के अन्य सदस्यों के साथ भी कुत्ता पूरी वफ़ादारी निभाता है। बन्नी मेरी बहन के साथ बैठकर शास्त्रीय संगीत का लंबा रियाज़ गत

कई वर्षों से करवा रहे थे। वह राग-रागिनी न समझ पाता हो लेकिन संगीत का असर तो पेड़-पौधों पर भी पड़ता है। बन्नी तो अत्यंत मृदुल स्वभाव के थे, हर भावनाओं को व्यक्त करने में सक्षम। शायद इसीलिए मेरी बहन की शिष्याओं का वह प्रेमपूर्वक स्वागत करते और जब कभी उन्हें संगीत कक्ष में जाने की अनुमति न मिल पाती तो विद्रोह करते थे। कुछ एक शिष्याएं तो काफ़ी हिल-मिल गयी थीं, उन्हें बन्नी के समीप बैठने में अच्छा लगता था लेकिन संगीत की कक्षा चल रही हो तो कुत्ते का वहां बैठे रहने पर किसी को आपत्ति न हो इसी कारण बहन ने बन्नी को नीचे चेन कर देना उचित समझा। जैसा आपको पता ही है कि बन्नी चेन करने को दंड दिया जाना समझते थे लेकिन संगीत के समय चेन किये जाने से बन्नी ने थोड़े समय में ही समझौता कर लिया, वह भी बुढ़ापे में। निःसंदेह यह उनकी संपूर्ण परिवार के प्रति एकनिष्ठा का प्रमाण थी।

मैं कार्यरत रहने के कारण बन्नी की देखभाल सुबह-शाम या छुट्टी के दिन कर पाती थी। चौबीस घंटे का सहवास उनका मेरी बहन के साथ था। बहन के लिए वह उनकी जीवनचर्या का अभिन्न अंग था। उनके हर काम में वह साथी, भोक्ता एवं कर्त्ता भाव रखता था। खाने-पीने के मामले में वह उनके ऊपर मानो पूर्ण रूप से आश्रित था, जैसे कितने अनुपात में दाल, सब्जी, दही, रोटी मिले, कितनी दफ़ा फ्रिज का ठंडा पानी, मीठे बिस्कुट मुरमुरा नाश्ते आदि में। लेकिन वह कितनी दफ़े नीचे उतरकर जायेगा, किस रास्ते से घूमने जायेगा, उसे कौन-कौन से हेलो (अभिवादन) करनी है, इस सबमें वह बिलकुल स्वतंत्र था। वह बहन को अपने मनमानी व्यवहार से खिझाकर रख देते। उनका कहना था कि बन्नी तो स्टेपनी (वाहन का अतिरिक्त पहिया) की तरह उन्हें इस्तेमाल करता है। इसमें संदेह नहीं कि बन्नी मेरा कहना ज़्यादा मानते थे। सुबह टहलने के वक़्त मैं उन्हें शारीरिक

परिश्रम करने के लिए बाध्य करती तो गुस्से से गुर्राकर मुझे डराते नहीं थे। नित्य बाल काढ़ते उनके टिक निकालने में मैं खीझ जाने लगी थी क्योंकि बुढ़ापे में उनके अगणित टिक होने लगे थे जिन्हें गुप्त स्थानों से निकालते समय मुझे काफ़ी घृणा-सी लगने लगती और बन्नी को भी शारीरिक कष्ट उठाना पड़ता था। फिर भी वह बेचारा मेरे पैरों में लेट जाता था जैसे कोई ऑपरेशन हो रहा हो। कभी-कभी खिसियाकर भागने का प्रयत्न अवश्य करता था लेकिन उसे शिशुवत् दबाकर पकड़ लेना मेरे लिए सहज था। यह अधिकार वह अन्य किसी को नहीं देता था। इसी तरह ज़्यादा बीमार पड़ने पर वह बेचैन होकर मेरे पास ही आता। मेरे घर पर उपस्थित न रहने पर वह गुमसुम रहता और जब तक न आ जाऊं, इंतज़ार करता रहता। बन्नी की मेरे ऊपर चौकीदारी के कारण परिवार के सदस्यों का मत था कि यह असली मालिक कौन है, उसे पहचानता है।

मालिक के घर की देखभाल के लिए कुत्ता पाला जाता है और वह अपने कार्यक्षेत्र को करीबन छः महीने में कुशलतापूर्वक समझ लेता है। बन्नी के जीवन काल में हम लोगों ने कई घर बदले। भिन्न-भिन्न परिवेश में उसने बड़ी बुद्धिमत्ता से चौकीदारी का काम किया लेकिन बुढ़ापे में वह धीरे-धीरे विरक्त-से हो रहे थे। मन हुआ तो मोर को छत पर नहीं बैठने देते। मन न हुआ तो छत पर कपड़े सुखाने मेरे साथ जाते-जाते सीढ़ियों के नीचे ही बैठ जाते या मारुति कार पर मुझे छोड़कर घर वापस आ जाते। पहले यह सब कार्य वह बड़े उत्साह से करते थे। मज़ाल था कोई पक्षी उनकी छत पर बैठे या मैं अकेली कार लेकर बाज़ार चली जाऊं। घर की चारदीवारी की तरह बन्नी को पूरा ज्ञान था कि उसका मालिक कब और किस समय उन्हें साथ ले जायेगा और कब इस तरह की जिद्द नहीं करनी है। समय की पाबंदी के वह बेहद कायल थे मानो उनके पेट में कोई घड़ी बंधी थी।

अपने नियमित नित्यकर्म के अतिरिक्त वह अपेक्षा करते थे कि उनका मालिक भी टाइम से खाये-पिये, पढ़े-सोये आदि। यदि कोई व्यतिक्रम होता तो वह अपने मालिक को अनुशासित करने में न चूकते। मुझे देर तक लिखता-पढ़ता देखकर वह अति व्याकुल हो जाते। अपना सिर किताब पर रख सोने के लिए बाध्य कर देते। बुढ़ापे में उनकी इस तरह की चौकीदारी का काम अवश्य बढ़ गया था। मैं भी भरसक प्रयत्न करती कि बन्नी के सहवास में जितना अधिक अपना समय दे सकूं उतना दूं क्योंकि उनका शरीर दिन पर दिन कमज़ोर हो रहा था और दांत गिरने लगे थे।

बन्नी को नहलाते समय उनकी हड्डियों का ढांचा देखकर मुझे वह एक असहाय मेमने-सा लगने लगता। मेरी बहन भी उलाहना देने लगती, "आप और डॉक्टर लोग कहते हैं कि यह मोटा है, इसका खाना कम करो। देखिए, इसकी हड्डी-हड्डी दिखलाई पड़ रही है। इसके बाल लंबे हैं, उन्हें फुलाकर यह मोटा दिखलाई पड़ता है। पैर की चोट के कारण वह भाग नहीं पाता। इसीलिए थुलथुल मोटा नज़र आता है।"

दांत गिर जाने के कारण बन्नी खाना बिलकुल चबाकर नहीं खाते थे। सब कुछ निगलकर पानी पीने की आदत के कारण उनका स्वास्थ्य दिनोदिन गिरता गया, जिसे देखकर सभी चिंतित थे। वह धीरे-धीरे ठुमुक-ठुमुककर चलने लगे थे इसलिए उन्हें चेन करके बाहर ले जाना पड़ता। कोशिश करके उन्हें चलाने की प्रैक्टिस की जाती, जिसे वह घर वालों का मन रखने के लिए कर देते थे वैसे अपनी इच्छा से निष्क्रिय-से होते जा रहे थे। एक दिन उन्हें चलाने की उमंग में मैं चेन से खींचती हुई एक पहाड़ी तक ले आयी। वहां आकर बन्नी थकान से चकनाचूर थे। स्नेह से मैंने उन्हें अपनी गोद में बैठा लिया। मुझे लगा बन्नी अपनी असमर्थता के लिए क्षमा-याचना कर रहा है। यही

बन्नी हिरन की तरह छलांगें मारते हुए पार्क के एक कोने से दूसरे कोने तक नाचते थे वही आज तेजहीन हुए अशक्यता की मूर्ति बने मेरी गोद में छिपे बैठे हैं । पहाड़ी पर बैठ मैंने उनकी दशा पर ये पंक्तियां लिखीं :

सांस प्रति सांस में
पिरोया जिसने
नयनों के झरोखे में
बिठाया जिसने
तन-मन की सुध
बिसरा कर दुलराया
प्यार से मुझे
वही समय आ जाने पर
नस-नस में भरी टीस बन
कंपा दे रहा मेरे चित्त को
जर्जर शरीर किंतु
मन प्राण पर छायी बन्नी के
नये जीवन की उमंग
मृत्यु द्वार खुला देख
मूक हो गयी विवशता समस्त मेरी
उसके स्वर्ग की छवि को अनुहार ।

17 मार्च 1989

मैं बन्नी की काया से चिंतित थी लेकिन जर्जर शरीर होने पर भी बन्नी में वही आन-बान-शान थी । नये पड़ोस में उनके फ़ैन (पसंद

करने वाले हितैषी) उनसे हाथ मिलाते, बन्नी बैठकर उनका खेल देखते रहते। उन्हें सुस्त देखकर बच्चे भी अपनी सलाह देने लगते, "यह लंगड़ाकर चलने लगा है । क्या डॉक्टर इसके प्लास्टर बांधकर इसकी टांग सीधी नहीं कर सकता ? कालोनी में कुत्तों के डॉक्टर की दुकान खुली है । वहां दिखाकर इसका इलाज़ हो सकता है ।"

बन्नी की निष्क्रियता बढ़ती जा रही थी, वह मिट्टी के मिठोलना बने चैन में खिंचे हुए कुछ देर चलकर थककर बैठ जाते थे। उन्हें गोदी में बिठाकर सीढ़ियों से ऊपर लाना पड़ता था । शारीरिक क्रिया के अभाव में उनके अवयव ढीले पड़ रहे थे। बच्चे भी बन्नी की डॉक्टरी जांच करवाने के लिए कह रहे थे अतः मैं कालोनी के डॉक्टर साहब के यहां दिखलाने पहुंची । उनका दवाखाना काफ़ी पापुलर (लोकप्रिय) हो गया था । कई लोग अपने-अपने कुत्तों को लिये इंतज़ार कर रहे थे अतः उनसे कल शाम का अपॉयंटमेंट (मिलने का समय) का समय लेकर वापस आ गयीं । दूसरे दिन ठीक टाइम से पहुंची लेकिन डॉक्टर के अधिक व्यस्त होने के कारण मुझे कुछ देर इंतज़ार करना पड़ा ।

डॉक्टर का कमरा एवं परीक्षण टेबल अत्यधिक सुरुचिपूर्ण रूप से सजाये गये थे। साफ़-सुथरे होने के अतिरिक्त वहां की साज-सज्जा अपनी ओर आकर्षित करने वाली थी । कुत्ते-बिल्लियों के उपयोग में आने वाली समस्त सामग्री एक शीशे की अलमारी में रखी हुई थी तथा दीवार पर उनके सुंदर-सुंदर फ़ोटो भी टंगे हुए थे। एक बड़े से नोटिस बोर्ड पर कई हिदायतें छपी हुई थीं और बड़े-बड़े अंग्रेज़ी अक्षरों में एक विज्ञापन सचित्र लगा हुआ था। "स्नोपी के लिए नीली आंखों वाली दुल्हन की ज़रूरत है ।" स्नोपी का वृहत रंगीन चित्र वास्तव में बड़ा मनमोहक था । कुत्ते के लिए शादी का विज्ञापन देखकर मुझे मन-ही-मन हंसी आ गयी, लेकिन अमीर लोगों के शौक़ का क्या

कहना ? काश ! ग्रामीण भारत के स्वास्थ्य संबंधी केंद्रों में ऐसी जानकारी दी जाती । वहां तो अनपढ़ माताओं को रोगी शिशु के घरेलू उपचार तक का ज्ञान उपलब्ध कराने के लिए ऐसे केंद्र नहीं खोले गये हैं ।

डॉक्टर साहब ने बड़ी देर तक बन्नी का परीक्षण किया और मुझे धीरज देते हुए अपनी पुरानी सलाह दुहरायी । उनके अनुसार आयु के अनुसार बन्नी का स्वास्थ्य बिलकुल ठीक था । सुस्ती कम करने के लिए टॉनिक देना हितकर रहेगा । अतः उन्होंने पहले से अधिक मूल्यों की ढेर सारी दवाई लिख दी और शारीरिक परिश्रम अधिक और मुटापा कम करने की सलाह दी । इस बार मुझे डॉक्टर के परीक्षण से काफ़ी खीझ आयी, क्योंकि इतना पैसा किसी ग़रीब बच्चे के इलाज में खत्म करना मुझे अधिक उचित लगा । परंतु घर में बहन की बन्नी के प्रति सेवाभाव और पड़ोसी बच्चों का कुत्तों के विशेषज्ञ द्वारा बन्नी का इलाज करवाने की पैरवी के सामने मुझे झुकना पड़ा, क्योंकि पैसा बहाने के अतिरिक्त मेरे पास दूसरा समाधान न था ।

बन्नी के अवयव ढीले हो रहे थे, मांस-पेशियां झुक गयी थीं और निरंतर निष्क्रियता बढ़ती जा रही थी । उसकी उदास आंखों में न कोई याचना थी, न आक्रोश, मानो वह तटस्थ हो गया है अपनी भाग्यरेखा से । बन्नी के सामने के दांत भी गिर गये थे जिसके कारण उसको खाना अच्छी तरह मींचकर देने लगे थे । उसे गोद में लेकर सीढ़ियों से उतारना होता । वह नज़दीक के पार्क में शौच आदि से निवृत्त होकर कुछ देर पार्क में घूमता या बेंच पर बैठकर बच्चों के साथ आनंदित हो लेता । उन्हीं दिनों मुझे सरकारी काम से बाहर जाना पड़ा । ऐसी हालत में बन्नी को छोड़कर जाने में मुझे चिंता हो रही थी लेकिन इस बार बन्नी ने मुझे बच्चों की तरह रो-धोकर विदा नहीं किया । सुनते हैं उसने खाना भी नियमित रूप से खाया और संवेगित

नहीं हुआ। उसका यह निर्लिप्त भाव वास्तव में अटपटा-सा लगा। वृद्धावस्था में इन्द्रियां जैसे-जैसे निष्क्रिय होने लगती हैं, जीव भी शनैः-शनैः अपना मोह छोड़ने लगता है। बन्नी की उदास आंखों में एक शांत भाव-सा आ रहा था मानो शरीर की पीड़ा से हटकर उसका अहं जीवनमुक्त होने के लिए कृत-संकल्प हो गया था जहां न सुख न दुःख, गर्मी न सर्दी केवल एक ही शांत भाव। मैं ही बन्नी के मोहपाश में बंधी हुई थी उसके पंजों से टिक निकालना, उसके स्वास्थ्य का पूरा-पूरा खयाल रखना, गोदी में ले जाकर नित्यकर्म करवाना आदि। मैं ही क्या, घर के प्रत्येक सदस्य का कर्तव्य हो गया था कि बन्नी की यथोचित सेवा की जाये। मेरा भतीजा विजय जैसे ही आता, बन्नी को गोद में बिठाकर उसके टिक बीनने लग जाता। यहां तक कि हमारी सफ़ाई कर्मचारी बीना जो जल्दी-जल्दी सफ़ाई का काम करने के लिए रोज़ाना नहीं आती थी, वह भी पार्क से बन्नी की टट्टी उठाने के लिए तैयार हो गयी। यदि बीना सहर्ष तैयार न होती तो संभव न था कि पार्क में बन्नी को नित्यकर्म करवाया जाता लेकिन बन्नी तो शुरू से भाग्यशाली थे। पूर्व जन्म में उन्होंने अवश्य सत्कर्म किये होंगे। इस जन्म में भी वह एक पुण्यात्मा की तरह सबको प्रेम करने वाला जीव अंत समय तक रहा। प्रेम के अतिरिक्त उसकी वृद्धावस्था में हरि-चर्चा में रुचि का वर्णन करना मेरे लिए एक अति कठिन कार्य है।

अपने सरकारी काम से निवृत्त होकर जब मैं घर वापस आयी उस समय बन्नी ने विशेष दुलार से मेरा स्वागत किया। गोद में बिठाते ही मेरी दृष्टि उसके बालों में रेंगती टिकों पर पड़ गयी। मैंने सारी टिकों को साफ़ कर देने का निश्चय कर लिया और बन्नी को नहला-धुलाकर छत पर सूखने के लिए धूप में रखना उचित समझा। स्वयं नहा-धोकर मैं पूजा करने चली गयी और बन्नी को पूजागृह में लाना भूल गयी। पूजा करते समय मैंने देखा बन्नी अपने गीले बालों में

धूल लगाये सर्दी से कंपकंपाते हुए मेरे पास पूजागृह में बैठे हैं और तन्मय होकर पाठ सुन रहे हैं। बन्नी चलने में असमर्थ थे अतः किसी तरह घसिटते हुए आये थे इसीलिए उनके गीले बालों में धूल लग गयी थी। उसकी भक्तिभाव को देखकर मुझे लगा कि यही भगवान् की पूजा का अधिकारी है। तुलसीदास जी ने तो रामचरितमानस में भक्ति को प्रधान माना है और सत्संग द्वारा भक्ति को सुलभ होना :

ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका। साधन कठिन मन कहुं टेका।
करत कष्ट बहु पावइ कोऊ। भक्ति हीन मोहि प्रिय नहिं सोऊ।
भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी।
पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता। सत संगति संसृति कर अंता॥

—उत्तरकांड

जो पराशक्ति में लवलीन हैं, वे कैसे पशु, पक्षी, मानव आदि की विभिन्न चेतनाओं में विभाजित किये जा सकते हैं ? हिंदू-धर्म के अनुसार बन्नी कुत्ते की योनि में होने के कारण मंदिर में घुसने का अधिकारी न था, लेकिन धर्मराज स्वयं कुत्ते का रूप धारण कर युधिष्ठिर के साथ स्वर्ग-द्वार पहुंच गये। हिंदू-धर्म में अनेक जटिल परस्पर-विरोधी बातें हैं जिनका समाधान हर व्यक्ति अपनी चेतना की विसंगतियों से मुक्त होकर कर पाता है मानो उसे जड़ और चेतन में अपने इष्टदेव के दर्शन होने लगे हैं। मेरा ध्यान अपनी पूजा-पाठ से हटकर बन्नी की भक्ति-विभोर आंखों की ओर था। सहसा मैंने देखा कि बन्नी के नीचे से पानी बह रहा है पूजा छोड़कर बन्नी को स्वच्छ करना पड़ा जिससे मुझे घृणा आने लगी।

लगा यह कौन पाप उदित होने वाला है ? पूजा करते समय मूत्र को साफ़ करने का मेरा पहला अनुभव था लेकिन बन्नी ने भी जहां बैठा हो वहां पेशाब आज तक नहीं की थी। निःसंदेह बुढ़ापे की जर्जर

काया में ठंड लग जाने के कारण वह अपने को रोक नहीं पाया। किंतु सफ़ाई करवाते समय बन्नी ने अपने को दोषी समझने के बजाय पूजा से उठा देने के लिए मुझे गुर्राकर डराया और मुझे घृणा करने के लिए तिरस्कृत किया।

सदैव बन्नी ने त्यौहारों को उमंग से मनाया क्योंकि वह हमारे परिवार की संस्कृति के अंग थे। इस बार दशहरे, दीवाली की तैयारियों में बन्नी ने चाव से हिस्सा लिया, जैसे उसकी तबीयत पहले से काफ़ी सुधर गयी हो। खाने-पीने की चीज़ों को प्रेमपूर्वक खाया और अतिथि लोगों का विशेष सत्कार किया। जो भी अतिथि बन्नी को लंबे समय के अंतराल के बाद देखता, वह उसमें शारीरिक परिवर्तन देख चिंतित होता, लेकिन बन्नी की मनपसंद मिठाई देने में न चूकता। उसके अनुसार, "खाया-पीया ही साथ जाता है और सब यहीं रह जाता है।" बन्नी ने भाईदूज पर मिठाई मन भरकर खायी। दीवाली पर पटाखों की आवाज़ से वह बेहद परेशान रहा, पूरी रात सांस लेने में तकलीफ़ महसूस करता रहा। बन्नी की तरह कितने अन्य वृद्ध लोग होंगे जिन्हें दीवाली की रात काटना दूभर हो गया होगा। काश ! पटाखों को जलाते समय बच्चे-जवान इस बात का अहसास करना सीख पाते।

नवंबर माह में मेरे बड़े भाई का इलाहाबाद से आना हुआ। वह बन्नी की खाने-पीने की कमज़ोरी को जानते थे। लाड़ से उन्होंने पुरानी दिल्ली से असली घी की कचौड़ियां मंगवायी, हम सब लोगों ने गर्म-गर्म कचौड़ी प्रेमपूर्वक उनके साथ खायी। थोड़ी-सी कचौड़ी बन्नी ने भी खायी जैसे सुरेन्द्र भाई का मान कर रहे हों। भाई साहब को भी आश्चर्य हुआ कि यह कुत्ता खाने-पीने से क्यों कतराने लगा है ? उसके बाद से तो बन्नी ने अन्न लेना छोड़ दिया मानो उनके खाने की नली बंद हो गयी हो। दोनों वक़्त उन्हें ताज़ा खाना दिया जाता, लेकिन वह

उसे सूंघते तक नहीं थे। केवल पानी पीकर आ जाते। उन्हें खाता-पीता न देखकर हम सब लोग काफ़ी चिंतित हुए, मैंने भरसक प्रयत्न किये कि वह अपने मनपसंद मीठे बिस्कुट या मुरमुरा ही खा ले, लेकिन कोई भी युक्ति काम न आयी मानो बन्नी संथारा (जैन मुनि लोग मृत्यु पास आता देख आमरण अनशन द्वारा इसी योग-साधना से शांतिपूर्वक मृत्यु को अंगीकार करते हैं) कर रहे थे। उन दिनों घर में चहल-पहल अधिक थी क्योंकि मेरे भतीजे विजय की पत्नी को अस्पताल में भर्ती करवा दिया गया था। उसका रक्तचाप बढ़ा हुआ था और डिलीवरी होने में कुछ दुश्चिताएं थीं। परिवार के अन्य सदस्य अस्पताल के चक्करों में अधिक व्यस्त थे लेकिन मैं और छोटी बहन बन्नी की सेवा का पूरा ध्यान रखते। उसे चम्मच द्वारा दूध पिलाने की भी कोशिश करते लेकिन वह कुछ भी अंदर जाने नहीं देता अतः कालोनी के डॉक्टर से परामर्श लेना मैंने उचित समझा।

डॉक्टर ने बन्नी को अच्छी तरह देखा। उनके अनुसार कोई बीमारी के लक्षण नहीं दिखलाई दे रहे थे। शायद मल इकट्ठा हो जाने के कारण खा-पी नहीं रहा है अतः उन्होंने मल उतारने के लिए बत्ती लगा दी और ताकत का एक इंजेक्शन भी दिया जिससे वह चलने-फिरने लगे। फीस देकर जब मैं चलने लगी तो डॉक्टर ने मुझे धीरज देते हुए कहा, "यदि आपको लगे कि यह कुत्ता परेशान कर रहा है तो मैं इसे सुला सकता हूं। यह काफ़ी बूढ़ा हो गया है। शायद बत्ती द्वारा मल निकलने से यह खाने-पीने लगे। इसे मैदान में ले जाकर घुमायें-फिरायें।" डॉक्टर का बन्नी को मृत्यु से पहले सुला देने का सुझाव सुनकर मैं अवाक् थी। बन्नी तो जैन मुनि की तरह शांति से अन्न जल छोड़कर शनैः-शनैः मृत्यु की ओर बढ़ रहे हैं। अतः हम लोगों को उसका संथारा सफल हो, इसके लिए पूरा सहयोग देना चाहिए या बन्नी को इंजेक्शन द्वारा चिर निद्रा में सुला देना चाहिए। डॉक्टर को

प्रताड़ित करने की मैं मनःस्थिति में नहीं थी, केवल इतना कह सकी, "यह तो बिलकुल शांतचित्त है। किसी तरह की तकलीफ़ में नहीं है। केवल खाता-पीता नहीं है। यह रात में सोता भी ठीक है। केवल खाना नहीं खाने से इसे टट्टी नहीं हो रही है इसीलिए मैं आपके पास लेकर आयी हूं। पहले यह स्वयं मल निकालने के लिए नौलिक्रिया कर लेता था। आजकल शरीर बहुत कमज़ोर हो गया है।"

"कितने दिनों से खा-पी नहीं रहा है ? वैसे तो कोई बीमारी नज़र में नहीं आ रही है। अगर कोई गड़बड़ी लगे तो मेरे घर पर टेलीफ़ोन कर सकती हैं," डॉक्टर ने दया दिखाते हुए अपना टेलीफ़ोन नंबर दे दिया।

बन्नी को मैंने गोद में बैठाकर प्यार से पूछा, "खाने-पीने का त्याग तुम कई दिनों से कर रहे हो। क्या अब मल निकालने की क्रिया को बंद कर देना चाह रहे हो, जिससे तुम्हारे काम में किसी को घृणा न आये ?" वह शांत भाव से टुकुर-टुकुर देखता रहा मानो अंतश्चेतना में पूरी जागरूकता थी। घर तक गोद में लिये-लिये लाने से मैं थक गयी थी अतः बन्नी को मैंने एक मुंडेर पर बैठा दिया और सोचा, दूसरी दिशा में पहुंचकर बन्नी को गोद में ले लूंगी। इस मुंडेर पर बन्नी साहब चढ़कर हमारा इंतज़ार करते हुए अक्सर बैठ जाते थे, जब कभी भी मैं आगे-पीछे हो जाती। लेकिन आज इस मुंडेर से बन्नी लुढ़ककर नीचे गिर गये और एक चीख उनके मुंह से निकल पड़ी। मेरे चित्त में अत्यधिक व्याकुलता व्याप्त हो गयी। क्या मेरी नादानी से बन्नी को चोट लग गयी है ? मैंने उठाकर देखा कहीं चोट आदि तो नहीं आयी है। लेकिन मेरी गोद में आते ही वह चिपककर शांत हो गया। मेरे मस्तिष्क में अवश्य एक सघन अंधकार छा गया, मैं अपने को बेहद थका हुआ महसूस कर रही थी।

घर के पास पार्क में खड़ा करके मैंने बन्नी को मलोत्सर्ग के लिए

काफ़ी प्रेरित किया लेकिन खड़ा होकर भी वह कोई विशेष ज़ोर नहीं लगा पा रहा था। हारकर मैंने अंगुली के दबाव से बत्ती निकाल दी। शारीरिक दुर्बलता के कारण उसे देर तक खड़ा भी नहीं रखा जा सकता था। मुझे इस बात का संतोष था कि उसे खड़े होने में कोई विशेष कष्ट नहीं हो रहा है। मुंडेर से गिरने पर यदि कोई अंदर की चोट आयी होती तो यह बिलकुल खड़ा नहीं हो पाता और मैं अपने आपको माफ़ न कर पाती। घर आकर मैंने छोटी बहन को सारा वृत्तांत बतलाया और बन्नी की चीख के लिए अपने को दोषी ठहराया। बहन ने मुझे धीरज देते हुए कहा, "कुत्ते-बिल्ली तो कितनी ऊंचाई से छलांग मारते हैं फिर आपने पार्क में कितनी देर तक इसे खड़ा रखा है, यदि कोई गहरी चोट आती या हड्डी टूटी होती तो यह रोता, इस समय तो यह बिलकुल वैसा ही है जैसा शांत घर से गया था।"

मेरा मन क्षोभ से उद्वेलित था। पूरे दिन मैं परिवार में होने वाले बच्चे के लिए कुछ कपड़े बनाती रही। बन्नी मेरे पास शांत बैठे रहे। परिवार के सदस्य डिलीवरी के बारे में चिंतित थे। बन्नी के कान टेलीफ़ोन की घंटी बजते ही खड़े हो जाते, मानो उसमें भी नवजात शिशु के शुभ समाचार आने की लालसा थी। पूरे दिन उसने कुछ खाया-पिया नहीं। शरीर के ममत्व को वह धीरे-धीरे कम कर रहा था। मानो मुंडेर से गिरकर अंतिम चीख में शारीरिक पीड़ा से मुक्त हो गया हो और वैराग्य में प्रबल।

सुबह उठकर भी बन्नी ने मलोत्सर्ग नहीं किया तो मैंने होम्योपैथिक डॉक्टर शुक्ला से मेडिकल में जाकर परामर्श करना उचित समझा। डॉ० शुक्ला मनुष्यों के अलावा कुत्तों का भी इलाज़ करने के लिए काफ़ी प्रसिद्ध हैं। उनके इलाज़ से बन्नी हमेशा भले-चंगे हो जाते रहे थे। डॉ० शुक्ला ने दस-दस मिनट के अंतराल में देने के लिए पांच पुड़ियां दीं और दो शीशी में अन्य दवाएं। क्रास की गयी

शीशी की दवा को पांचों पुड़ियों की दवा खिलाने के बाद शुरू करना था। और तीन घंटे बाद बिना क्रास वाली दवा देनी थी। इस तरह तीन-तीन घंटे बाद दवा देकर दूसरे दिन हाल बतलाना था। घर आकर मुझे लगा कि इस दवा से बन्नी अवश्य ठीक हो जायेंगे क्योंकि आज सुबह से वह अधिक चैतन्य लग रहे थे। बहन ने बतलाया, "आज शास्त्रीय संगीत को बन्नी ने खूब आनंदित होकर सुना। संगीत सुनते समय इसके बाल तारों की तरह खड़े हो गये थे। संगीत सुनने के बाद इसे लंबी पेशाब भी हुई और दो एक चम्मच दूध में मिला हुआ कैपलान भी पी लिया है। खिलाने-पिलाने के बाद पार्क भी ले गयी। वहां बैठकर यह बच्चों के खेल देखता रहा। मुझे किसी तरह की शारीरिक पीड़ा इसमें नहीं लग रही है।" ये सब सुनकर मुझे भी अत्यधिक संतोष हुआ।

कहते हैं मृत्यु सचमुच संग्राम है। मृत्युकाल में मूढ़ता और भय से पराजित होने वाला साधना से च्युत हो जाता है तथा अनासक्त और अभय रहने वाला साधना के शिखर पर पहुंच जाता है। इसीलिए शास्त्र कहते हैं कि मृत्यु की उपस्थिति होने पर मूढ़ता उत्पन्न नहीं होनी चाहिए। मूढ़ता से बचने की तैयारी जीवन के अंतिम क्षणों में नहीं होती, वह पहले से करनी होती है, शायद जन्म-जन्मांतरों में। बन्नी ने शरीर के ममत्व से चित्त हटा लिया था और उसके चित्त में पल-पल प्रतीक्षा करती हुई केवल एक जागरूकता थी।

बहन ने बन्नी की प्रिय गद्दी की रुई आदि को ठीक-ठाक कर नया गिलाफ़ चढ़ाकर तैयार रखा था। मैंने उसी पर बन्नी को लिटा दिया और दस-दस मिनट बाद दवा देने का कार्यक्रम शुरू किया। बन्नी के पास बैठकर ही मैंने नवजात शिशु के लिए ऊन के टोपा-मोजे बुने, क्योंकि नवंबर की 16 तारीख़ हो गयी थी। अतः उसके पैदा होते ही इन सब ऊनी वस्त्रों की ज़रूरत पड़ती। बन्नी शांत मन से गोली

खाकर पानी गटक लेते। उनका अत्यधिक सहयोग पाकर मेरे मन से अब यह विपदा टल जायेगी। ऐसी आशा-किरण जाग गयी।

शाम को आकाश बादलों से घिरा हुआ था। मंद-मंद फुहारें गिर रही थीं। शरद ऋतु का आगमन हो गया था लेकिन परिवार के लोगों का मन चिंतित था। सहसा टेलीफ़ोन की घंटी बजी, मैंने भागकर रिसीव किया। वहां से शुभ समाचार मिला, "बधाई हो, अंजना (विजय की पत्नी का नाम) के शाम को लड़का हुआ है, मां और बच्चा दोनों स्वस्थ हैं। डिलीवरी नार्मल थी (शिशु जन्म सामान्य था)।"

मैंने यह शुभ समाचार अपनी छोटी बहन को दिया और बन्नी को लेकर पार्क में गयी। मुझे विश्वास था कि बन्नी इस शुभ समाचार से अति संवेगित हो मलोत्सर्ग कर देंगे, दवा भी पूरी दी जा चुकी थी। वहां पहुंचकर बन्नी ने खड़ा होने का भी कोई प्रयास नहीं किया। जितनी बार मैं उसे खड़ा करती वह अपनी गरदन को लटका देता और धम्म से ज़मीन पर गिरने लगता जिसे बीच में पकड़कर मैं मज़बूती से अपनी टांगों पर रख लेती। ऐसी मुद्रा में कुत्ते के मलोत्सर्ग होने का कोई प्रश्न न था। मुझे समझ में नहीं आया कि अब क्या किया जाये? झिड़ककर मैंने कहा, "बन्नी साहब, यदि आप स्वयं कुछ नहीं करना चाहते तो हम लोग आपके लिए क्या कर सकते हैं? अब तो आप विजय के बच्चे के बाबा बन गये हैं, आपको पोते की तरह क्या पोटी करवानी होगी?" थोड़ी देर तक मैं उसे अपनी टांगों पर बच्चों की तरह पोटी करवाने बिठाया लेकिन उसके मलद्वार पर डॉट-सी लग गयी थी। उसने पेशाब तक नहीं की। दोनों गुप्त द्वार बंद हो गये थे। हताश हो मैं उसे वापस ले गयी और छोटी बहन को दे दिया। बहन ने उसे दो-तीन चम्मच दूध पिलाने की कोशिश की लेकिन उसने तुरंत सब कुछ बाहर निकाल दिया। मानो आजीवन कुछ नहीं खाने-पीने का

उचित समय आ गया था। बन्नी को गद्दी पर आराम से सुलाकर हम दोनों सोने चले गये।

नवंबर 17 की सुबह क़रीब चार बजे बहन ने उठकर बन्नी को पेशाब कराने की चेष्टा की, लेकिन वह अपने अवयव ढीले छोड़ने लगा, घबराकर उसने मुझे उठाया। मैंने देखा नाड़ी की गति बहुत क्षीण हो चुकी थी, अब यह शरीर ज़्यादा टिकेगा नहीं। उसकी आंखों में अंतिम विदा की विनीत याचना थी। मानो दो आंखें खुली हुई अनंत दिशा को खोजने के लिए आतुर हो रही हों। उसके नीचे के शरीर से प्राण निकल चुके थे, केवल चेहरे पर ही अलौकिक आभा थी। हृदय की गति अत्यंत धीमी-धीमी चल रही थी। उसकी प्यारी गद्दी पर लिटाकर हम दोनों बहनों ने इस पुण्यात्मा के लिए ईश्वर से प्रार्थना करना अपना परम कर्तव्य समझा। बहन राम नाम जपने लगी और मैंने प्रातःकालीन ध्यान शुरू कर दिया। बन्नी शांत मुद्रा में लेटे हुए थे, कोई पीड़ा न थी, कोई स्पंदन न था। मेरा ध्यान टूटा तो चार बजकर पचास मिनट हो रहे थे। मुझे लगा बन्नी शांत मुद्रा में समाधि अवस्था में लेटे हुए हैं। उनकी प्यारी गद्दी बिलकुल साफ-सुथरी थी। शरीर पूर्णतया निश्चेष्ट हो गया था, आंखें मुंदी हुई थीं।

सूर्य की किरणें फूटने लगी थीं लेकिन मृतक देह का अंतिम संस्कार कराने के लिए मुझे सफ़ाई कर्मचारी या अन्य किसी पुरुष की अति आवश्यकता थी, जो मेरे साथ जाकर उसका यह काम करवाता। बाहर निकलकर मैंने प्रिय बन्नी की मृत्यु का दुःखद समाचार अपनी कालोनी के चौकीदार को दिया जिससे वह किसी जमादार को जल्दी भिजवा सके। घर वापस आकर मैंने भागवत् की कथा को पढ़ने के लिए जैसे ही पृष्ठ खोला उसमें श्रीकृष्ण की मृत्यु का संवाद खुल गया। उसे पढ़कर बड़ा आत्मिक संतोष मिला। कुत्ते की मृत्यु पर योगिराज कृष्ण की मृत्यु के दृष्टांत को पढ़ने का मेरा पहला सुअवसर था।

बाद की प्रक्रिया को मेरी पड़ोसी श्रीमती पंत ने संपन्न करवाने में बड़ी मदद की। उनका नौकर नारायण हमारे साथ हो लिया और भाग्य से एक सफ़ाई कर्मचारी भी फावड़ा लेकर आ पहुंचा। हमारे पड़ोस में ही बाबा गंगनाथ का विशाल मंदिर है उसके सामने काफ़ी खुला हुआ मैदान है। सफ़ाई कर्मचारी ने काफ़ी गहरा गड्ढा खोदा और मैंने अपनी छोटी बहन, नारायण तथा सफ़ाई कर्मचारी के साथ बन्नी के पार्थिव शरीर पर ढेर सारा नमक डालकर चिरनिद्रा में सुला दिया।

धन्य है बन्नी जो एक कूकुर जाति में जन्म लेकर दिल्ली जैसी **महानगरी** में इतने सुंदर-शांत आध्यात्मिक स्थल पर चिर विश्राम पा सके। उनका संथारा मृत्यु के सार्वभौम नियम को उजागर कर गया कि जो प्राणी उससे भयभीत नहीं होता, वही पारगामी होता है।

□□

101.5 फारेनहाइट होता है, मनुष्य का 98.6 फारेनहाइट। कुत्ते को आदमी जैसा पसीना नहीं आता। वह अपनी जीभ बाहर निकालता है और हांफता है। इसी तरह से वह अपने आपको ठंडा करता है। ऐसे कई अंतर होने पर भी कुत्ते की समझ मनुष्य से कई बातों में अधिक होती है।

इस पुस्तक में बन्नी की लेखिका के जीवन में प्रवेश से अंत तक ऐसा मधुर संबंध स्थापित होता रहा है कि उसे एक तरह से सखा, शिष्य, दिशादर्शक, रक्षक मित्र, बंधु, बालक, स्नेहभाजन सब कुछ कहा जा सकता है। और उसके बाद भी कुछ अपरिभाषेय रह जाता है। डॉ. दुबे केवल मनोविज्ञान की विशेषज्ञा ही नहीं हैं, प्राणी-जीवन की मूक भाषा भी वे उसकी आंखों, स्पर्श और व्यवहार से पहचानने की अद्भुत क्षमता रखती है। अकेले जीवन की यह साथी अब डॉ. दुबे को और अकेला कर गया। यह श्रद्धांजलि एक अद्भुत संबंध के प्रति है। पालित पशु के प्रति भक्ति और भावुकता दोनों ओर प्रेम पलता है।

यह पुस्तक हर अहिंसा-प्रेमी को पढ़नी चाहिए। यह बन्नी की गाथा नहीं, मनुष्य की उदारता की कथा है। हम सब अधिक सभ्य बनें, प्राणी जीवन के प्रति अधिक संवेदनशील बनें, यही इस पुस्तक का संदेश है।

मैंने कोई भी प्राणी कभी पाला नहीं। पर लगता है कि मेरे भीतर ही कई प्राणी हैं, या कि जिन्हें मैं चाहता हूं उनके भीतर कई प्राणी जिन्हें वन्य से पालित करते रहने की नित्य आवश्यकता है।

मैं लेखिका को बधाई देता हूं। उनकी भाषा शैली विषयानुरूप, प्रसाद गुणवती, सरस है।

प्रभाकर माचवे

ज्ञान भारती
4/14, रूपनगर, दिल्ली-110007